प्रवाह

महोत्सव विश्वास का 75
निर्भीक पत्रकारिता का आठवां दशक
स्थापना वर्ष : 1948

भीड़ का अनुसरण मत करो, क्योंकि वह कहीं पहुंचती नहीं।
-फ्रेडरिक लेंज

बाढ़ के कहर से जूझ रहे पूर्वोत्तर राज्य हों, गुजरात का तूफान हो या उत्तर भारत की गर्मी, पिछले कुछ समय से जलवायु परिवर्तन के प्रभाव जिस तीव्रता से दिखने लगे हैं, उन्हें देखकर मौसम में बदलाव की हर आहट एक अलग किस्म का डर भी पैदा करती है।

मौसम, मौसम न रहा

पिछले कुछ महीनों से भीषण हीटवेव से जूझ रहा उत्तर भारत इन दिनों मौसम की लुका-छिपी से जरूर राहत की सांस ले रहा है, लेकिन देश के अन्य हिस्सों, खासकर पूर्वोत्तर, उत्तराखंड व गुजरात के मौसम में जो असामान्यता दिख रही है, वह डराती भी है। उल्लेखनीय है कि असम व अरुणाचल प्रदेश पिछले एक महीने से बाढ़ से जूझ रहे हैं, जिससे लाखों लोग बेघर हो चुके हैं। वहीं, बदरीनाथ धाम में लगातार बारिश से तीर्थयात्री व स्थानीय लोग बेहाल हैं, तो गुजरात में भी तूफान से जन-जीवन अस्त-व्यस्त होने की खबरें मिल रही हैं। दरअसल, पिछले कुछ समय में जलवायु परिवर्तन के प्रभाव जिस तीव्रता के साथ देखने को मिल रहे हैं, वे डराने वाले हैं। केंद्रीय स्वास्थ्य मंत्रालय की रिपोर्ट के अनुसार, इस वर्ष जून के मध्य तक देश के कुछ हिस्सों में लू के कारण करीब 143 लोगों की मौत हुई और करीब 42 हजार हीटस्ट्रोक के संभावित मामले सामने आए। अकेले पिछले साल, देश को 318 दिनों में चरम मौसम की घटनाओं का सामना करना पड़ा, जिसके परिणामस्वरूप 3,287 मौतें हुईं, करीब 22 लाख हेक्टेयर क्षेत्र में फसल प्रभावित हुई, 86,432 घर क्षतिग्रस्त हो गए, और लगभग 1,25,000 जानवरों की मौतें हुईं। उल्लेखनीय है कि वर्ष 1850 के बाद से पृथ्वी पर औसत वैश्विक तापमान करीब 1.1 डिग्री सेल्सियस बढ़ गया है, जिसकी मुख्य वजह मानवीय गतिविधियों के चलते ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन में वृद्धि है। इसके ही नतीजे चरम मौसमी घटनाओं के रूप में दिख रहे हैं। बीते जून में सामान्य से 11 फीसदी कम बारिश हुई, जो 2001 के बाद सबसे कम बारिश वाला महीना रहा, लेकिन मौसम विभाग का कहना है कि जुलाई में देश के लगभग सभी हिस्सों में सामान्य से ज्यादा बारिश होने की उम्मीद है। मौसम की यह असामान्यता चिंतित करने वाली है, लेकिन इसको लेकर जो लापरवाही बरती जा रही है, वह उतनी ही हैरत में डालने वाली है।

एक शोध के अनुसार, 1999 से लेकर 2020 के बीच संसद में पूछे गए कुल प्रश्नों में करीब 0.3 फीसदी ही जलवायु से संबंधित थे। हालिया लोकसभा चुनावों में इस मुद्दे को लेकर शायद ही कोई आवाज उठी हो, मानो यह कोई मुद्दा ही न हो। मौसमी घटनाएं जिस तरह से अपने चरम रूप में बार-बार सामने आ रही हैं, उससे स्पष्ट होता है कि जलवायु परिवर्तन अब भविष्य की समस्या नहीं रह गई। मुद्दे की गंभीरता को समझते हुए इसे प्राथमिकता में लेना ही जलवायु परिवर्तन की व्यापक चुनौती के समाधान की दिशा में पहला कदम हो सकता है।

अनियंत्रित भीड़ के खतरे

हाथरस हादसे ने एक बार फिर साबित किया है कि उत्साह और भीड़ का मेल अच्छा नहीं होता। जब अनुमान से इतने ज्यादा लोग हों, तो व्यवस्थाएं अपर्याप्त हो ही जाती हैं। आयोजकों को जवाबदेह बनाने के साथ लोगों को भीड़-भाड़ में सुरक्षित व्यवहार के बारे में शिक्षित किया जाना चाहिए, ताकि ऐसी दुर्घटनाएं फिर न हों।

कुछ वर्ष पहले मैं खुद श्रद्धालुओं की भीड़ में फंस गई थी। बृहस्पतिवार की उस गर्म दोपहर में हम सभी लोग शिरडी में साईं बाबा के दर्शन के लिए जा रहे थे। एक समय ऐसा आया, जब श्रद्धालुओं की भीड़ इतनी बढ़ गई कि मैं बेचैन हो उठी और मुझे लगा कि मैं वापस बाहर निकल जाऊं। लेकिन निकलने का कोई रास्ता नहीं दिख रहा था। मैं लोगों की भीड़ में फंसी हुई थी और अगर जरा भी चूक होती, तो कुचले जाने के अलावा और कोई विकल्प नहीं था।

मैं वहां से किसी भी तरह स्वस्थ और सुरक्षित वापस निकलने के लिए प्रार्थना कर रही थी। मैं असहाय महसूस कर रही थी। सौभाग्य से निर्विघ्न दर्शन संपन्न हो गए। लेकिन उस दोपहर की यादें अब भी मेरे जेहन में हैं। और हर बार जब भी कहीं भीड़ के कुचलने की घटना होती है, तो वह घटना फिर से सामने आ जाती है। ऐसी घटनाएं हमारे देश में आम हैं, लेकिन ऐसा बहुत कम मौकों पर होता है, खासकर धार्मिक समारोहों के दौरान।

अद्वैता काला
पत्रकार, फिल्म कथा लेखक एवं चर्चित उपन्यासकार

ऐसी त्रासद घटनाएं केवल भारत में ही नहीं, बल्कि दुनिया के अन्य हिस्सों में भी होती हैं। वर्ष 2015 में पवित्र हज यात्रा के दौरान 2,000 से ज्यादा श्रद्धालु भीड़ में कुचलकर मर गए थे। अभी हाथरस में एक स्थानीय धर्म गुरु के सत्संग से बाहर निकलते समय 120 से ज्यादा लोग भीड़ में कुचलकर मर गए। हालांकि भारत में भीड़ में कुचलने का इतिहास काफी पुराना है। स्वतंत्र भारत में ऐसी पहली घटना फरवरी, 1954 में कुंभ मेला के दौरान हुई थी, जिसमें आज भी लाखों श्रद्धालु आते हैं। अनुमानों के मुताबिक, उस त्रासद घटना में करीब 800 तीर्थयात्रियों ने अपनी जानें गंवाई थीं। उस समय *द गार्जियन* में छपी रिपोर्ट में सैकड़ों लोगों के लापता होने की बात कही गई थी।

भीड़ द्वारा कुचले जाने की दुखद कहानी दशकों से जारी है। दक्षिण भारत के सबरीमाला से लेकर नागपुर, मध्य प्रदेश और पटना तक, इन

घटनाओं ने श्रद्धालुओं को झकझोर कर रख दिया है। यह बात साबित हो चुकी है कि उत्साह और भीड़ का मेल अच्छा नहीं होता, फिर भी हमारे जैसे धार्मिक देश में इनका मेल अपरिहार्य रूप से होता ही है। हालांकि कुंभ जैसे बड़े धार्मिक आयोजनों का प्रबंधन अच्छी तरह से किया गया है, खासकर मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ के कार्यकाल में पिछले कुंभ का। लेकिन, 'छोटे' धार्मिक आयोजनों एवं सत्संगों में यह नहीं दिखता। हालांकि, ऐसे ज्यादातर आयोजन तमाम अव्यवस्थाओं के बावजूद सुरक्षित ढंग से निपट जाते हैं, लेकिन हाथरस जैसी विनाशकारी घटनाएं हमें एक बार फिर अनियंत्रित भीड़ के पीछे छिपे खतरे के बारे में चेताती हैं। हालांकि किसी की भक्ति एवं आस्था को नकारा नहीं जा सकता और यह लोगों का अधिकार है। ऐसे सामूहिक आयोजन मानवीय पीड़ा के लिए सांत्वना और सामुदायिक भावना प्रदान करते हैं। ऐसे आयोजनों में जाने वाले लोग आम तौर पर समाज के गरीब तबके के होते हैं और जब लोग इन पर टिप्पणी करते हैं, तो उनमें अभिजात वर्गीय भावना ही दिखती है।

देश में अक्सर होने वाली इन घटनाओं के प्रबंधन के लिए तत्काल एक व्यापक नीति की आवश्यकता है। हालांकि ऐसे आयोजनों से पहले प्रशासन से मंजूरी लेने का प्रावधान है, लेकिन इन सभाओं में आने वाले लोगों की संख्या हमेशा गलत होती है। अक्सर इनमें उपस्थित होने वाले लोगों की संख्या अनुमान से ज्यादा होती है, जिससे सभी व्यवस्थाएं अपर्याप्त हो जाती हैं। आखिर जब अप्रत्याशित ढंग से भीड़ इकट्ठी होकर अनियंत्रित ढंग से व्यवहार करने लगे, तो कितनी भी व्यवस्था कम ही पड़ेगी। ऐसे में यह जरूरी है कि इन सत्संगों के आयोजक को भीड़ के लिए जिम्मेदार ठहराया जाए। अधिकारियों को भीड़ को सीमित करना चाहिए, हालांकि इससे भावनात्मक समस्या पैदा हो सकती है और स्थिति नियंत्रण से बाहर जा सकती है। लेकिन सुरक्षा के हित में लोगों को वापस भेजा जाना चाहिए और जरूरत होने पर आयोजकों को भी दंडित करना चाहिए। इससे यह सुनिश्चित होगा कि जब आयोजक भक्तों को बुलाएंगे, तो उनकी ज्यादा बड़ी जवाबदेही होगी। इसके अलावा, पुलिस की मौजूदगी के बावजूद यह महत्वपूर्ण है कि धर्म गुरु, जो निश्चित रूप से संपन्न होते हैं, सुरक्षा बढ़ाने, किसी अप्रिय घटना की स्थिति में आपात एवं प्रारंभिक चिकित्सा सुविधाओं की व्यवस्था करने के लिए निजी भीड़ प्रबंधन पेशेवरों की व्यवस्था करें। इन आयोजनों में पुलिस बल का ध्यान मुख्यतः आतंकवादी घटनाओं से सुरक्षा पर होता है।

शांतिपूर्ण भक्तों की भीड़ का प्रबंधन उनकी दूसरी प्राथमिकता होती है। भक्तों का सुचारु आवागमन सुनिश्चित करने के लिए उन्हें पेशेवर भीड़ प्रबंधकों के सहयोग की आवश्यकता होती है। इन मुद्दों का समाधान केवल निजी और सार्वजनिक सहयोग से ही हो सकता है। ऐसी घटनाएं घट जाने के बाद फरार धर्म गुरु का पीछा करना देर से उठाया गया नाकाफी कदम है।

होना तो यह चाहिए कि तीर्थयात्रियों और भक्तों को भीड़-भाड़ वाली स्थिति में उचित और सुरक्षित व्यवहार के बारे में शिक्षित किया जाए। सामूहिक घबराहट अनिवार्य रूप से ऐसी त्रासद घटनाओं का कारण है। हाथरस हादसे में भी आयोजन बगैर किसी हादसे के संपन्न हो ही गया था, लेकिन धर्म गुरु के पास जाने और उनके पैर छूने की होड़ के कारण भगदड़ मच गई। ऐसी अपार भक्ति उन लोगों को राहत प्रदान करती है, जो असहाय महसूस करते हैं, जो मानते हैं कि एक स्वयंभू 'दिव्य' सत्ता की एक झलक पाने या स्पर्श करने भर से उनका जीवन संवर जाएगा। यह एक ऐसी भावना है, जिसका प्रबंधन कोई भी सुरक्षा व्यवस्था नहीं कर सकती।

ऐसी परिस्थितियों में त्रासद घटनाएं होना अपरिहार्य है और इसका समाधान व्यावहारिक कदमों से निकल सकता है, जैसे कि व्यवस्थाएं बनाना और आयोजकों व धर्म गुरुओं को जवाबदेह बनाना। लेकिन सबसे महत्वपूर्ण समाधान तो आम जनता में ही निहित है, जो निहायत भोलेपन और अच्छे इरादों के साथ इन आयोजनों में शामिल होती है।

edit@amarujala.com

जीवन धारा

तिक न्यात हान्ह

चाय आहिस्ता-आहिस्ता और सम्मानपूर्वक पीजिए। इसे ऐसे पिएं जैसे, यही वह धुरी है, जिस पर पृथ्वी घूमती है। धीरे-धीरे, भविष्य की ओर भागे बिना वास्तविक क्षणों को जिएं। यह जो क्षण है, वही जिंदगी है।

जमीन पर ऐसे चलें जैसे उसे चूम रहे हों

जिंदगी में ज्यादा भागमभाग करने की जरूरत नहीं है। जहां हैं, वहीं ठीक हैं। बस उस जगह पर उन पलों में ध्यान का गहरा अभ्यास कीजिए। ज्यादातर लोग इस बात पर विश्वास नहीं कर सकते कि सिर्फ चलना ही पर्याप्त है, जैसे आपको कहीं जाना ही नहीं है। बुद्ध कहते हैं कि मेरा पूरा अभ्यास ही बिना प्रयास का अभ्यास है। यह बात बहुत मायने रखती है। सभी संघर्ष छोड़ दें। खुद को आराम करने दें। लोग अक्सर निर्वाण में जाने की बातें करते हैं, लेकिन हम पहले से ही वहां हैं। लक्ष्यहीनता और निर्वाण एक ही है। हम में से ज्यादातर लोग जीवन भर बस भागते ही रहते हैं। शांति फिर भी नहीं मिलती। जरा रुकने का भी अभ्यास करें। शांति वहीं पर मौजूद है, जहां आप हैं। यह हमारे अंदर है। हम जो भी करते और देखते हैं, वहां मौजूद है। हमारी हर सांस और हमारे हर कदम में शांति, आनंद और स्थिरता भरी हुई हैं। सवाल सिर्फ इतना है कि हम इनके संपर्क में हैं या नहीं। इसके लिए ज्यादा कुछ करने की आवश्यकता नहीं है। बस, वर्तमान क्षण में जागृत और जीवित रहने की जरूरत है।

इसे हम कुछ इस तरह समझ सकते हैं। अपनी चाय आहिस्ता-आहिस्ता और सम्मानपूर्वक पीजिए। इसे ऐसे पीजिए जैसे, यह वह धुरी है, जिस पर पृथ्वी घूमती है। धीरे-धीरे, भविष्य की ओर भागे बिना वास्तविक क्षणों को जिएं। यह जो क्षण है, वही जिंदगी है। सांस लेते और छोड़ते समय महसूस करें कि मैं यहां हूं। चलने के ध्यान का अभ्यास करें, तो कोई प्रयास न करें। अपने आप को नदी में पड़े कंकड़ की तरह छोड़ दें, जिसे कुछ भी करना नहीं होता। चलते, बैठते समय भी आराम से रहें। अपने दांत साफ करते समय, चाय या कॉफी बनाते हुए, बालों को संवारते वक्त, नहाते समय, अपना या बच्चों का लंच पैक करते समय, कुत्ते को घुमाते हुए, कपड़े धोते समय या सफाई के पलों का आनंद लीजिए। आप जिस समय जो काम कर रहे हैं, उसी में मन लगाकर शांति अनुभव करें। जमीन पर ऐसे चलें, जैसे आप उसे चूम रहे हों। अभी और यहीं पर रहने का मतलब यह नहीं है कि आप अपने अतीत के बारे में न सोचें या फिर भविष्य की जिम्मेदारियों को लेकर कोई योजना न बनाएं।

बात इतनी-सी है कि आप अपने अतीत पर पछतावा न करें और भविष्य की चिंताओं में न खो जाएं। यदि आप वर्तमान में दृढ़ता से स्थिर हैं, तो अतीत सचेतनता और एकाग्रता का विषय हो सकता है। इसलिए अतीत से अंतर्दृष्टि प्राप्त कर वर्तमान क्षणों पर टिके रहें। दरअसल, भूतकाल बीत गया है और भविष्य हमारे पास है नहीं। यदि हम अपने वर्तमान क्षणों की ओर नहीं लौटे, तो जिंदगी के संपर्क में नहीं रह सकते।

होड़ से हटने में ही शांति

सूत्र

हम अक्सर सोचते हैं कि युद्ध न हो और शक्तिशाली देश हथियारों की होड़ खत्म कर दें, तो शांति मिलेगी। यदि हम गहराई से सोचें, तो ये हथियार हमारे मन में हैं। भले ही आप बमों को चंद्रमा पर पहुंचा दें, देर-सबेर ये फिर बन जाएंगे। क्या इससे शांति मिल जाएगी? शांति के लिए अपने दिलों से युद्ध की जड़ों को उखाड़ फेंकना होगा। यदि हम दैनिक जीवन में मुस्करा सकते हैं, शांतिपूर्ण और खुश रह सकते हैं, तो यह स्थायी शांति की बुनियाद होगी।

दूसरा पहलू

मच्छर सभी की ओर आकर्षित होते हैं, पर आप बार-बार इन्हें दूर करने की कोशिश करेंगे, तो वे उतना ही ज्यादा धावा बोलेंगे।

क्या मच्छर आपको भी ज्यादा काटते हैं

अगर आपको यह लगता है कि मच्छर दूसरों की तुलना में आपको ज्यादा काटते हैं, तो जॉन्स हॉपकिंस यूनिवर्सिटी स्कूल ऑफ मेडिसिन के एसोसिएट प्रोफेसर क्रिस्टोफर पॉटर की बात आपको जरूर सुननी चाहिए। वह कहते हैं कि मच्छर सभी की ओर आकर्षित होते हैं, लेकिन अगर आप बार-बार उसे अपने से दूर करने की कोशिश करेंगे, तो वे उतना ही ज्यादा आपकी ओर धावा बोलेंगे।

दरअसल, विशेषज्ञों ने दो वजहों की पहचान की है, जिनके चलते हम मच्छरों के प्रेम के पात्र बनते हैं। इन दो में एक जैविक पहलू है, जिसे बदला नहीं जा सकता, तो दूसरा व्यवहारिक पहलू है, जिसमें हम बदलाव ला सकते हैं। मनुष्य के शरीर में फैले सैकड़ों अणु मिलकर आपकी एक खास गंध बनाते हैं। डॉ. पॉटर कहते हैं कि मुमकिन है कि कुछ मनुष्यों के शरीर से आती गंध से मच्छर आकर्षित होते हों। प्रिंसटन यूनिवर्सिटी की प्रोफेसर लिंडी मैकब्राइड कहती हैं कि मच्छर उन गंधों के प्रति भी संवेदनशील हो सकते हैं, जिन्हें मनुष्य नहीं पहचान सकते हों। उदाहरण के लिए, मच्छर त्वचा पर पाए जाने वाले तैलीय पदार्थ, जो इसे सूखने से बचाता है, से आने वाली गंध से आकर्षित हो सकते हैं। क्लीवलैंड क्लीनिक के डॉ. क्रिस्टोफर बजोली कहते हैं कि मच्छरों के आकर्षित होने में रक्त का प्रकार भी मायने रखता है। इसके अलावा, सांस लेने का हर आदमी का एक ढंग होता है। डॉ. बजोली के अनुसार जब हम सांस छोड़ते हैं, तब हम वातावरण में कार्बन डाई ऑक्साइड छोड़ते हैं। इससे भी मच्छर आकर्षित हो सकते हैं।

डैनी ब्लम

दो वजहों से हम मच्छरों के प्रेम के पात्र बनते हैं। इन दो में एक जैविक पहलू है, जिसे बदला नहीं जा सकता, तो दूसरा व्यवहारिक पहलू है, जिसमें हम बदलाव ला सकते हैं।

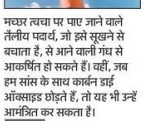

मच्छर त्वचा पर पाए जाने वाले तैलीय पदार्थ, जो इसे सूखने से बचाता है, से आने वाली गंध से आकर्षित हो सकते हैं। वहीं, जब हम सांस के साथ कार्बन डाई ऑक्साइड छोड़ते हैं, तो यह भी उन्हें आमंत्रित कर सकता है।

आप व्यायाम के बाद सांस तेजी से छोड़ेंगे, तो अधिक कार्बन डाई ऑक्साइड पैदा करेंगे। इसके अलावा, पसीना भी मच्छरों को एक शक्तिशाली संदेश भेजता है। अल्कोहल का सेवन करने वालों के शरीर की गंध अलग हो सकती है, जो मच्छरों को लुभा भी सकती है। अगर आप मच्छरों से बचना चाहते हैं, तो जब मच्छर आसपास हों, तब सुगंध रहित उत्पादों का इस्तेमाल करने की कोशिश करें। परफ्यूम के बारे में तो सोचें भी मत। डॉ. बजोली के अनुसार, काले और गहरे नीले रंग के कपड़े मच्छरों के लिए चुंबक की तरह काम करते हैं। अतः हल्के रंग के कपड़े पहनें। त्वचा की गंध को छिपाने के लिए बाजार में कई उत्पाद उपलब्ध हैं। डॉ. मैकब्राइड कहते हैं कि एक पंखा लें और मेज के नीचे रखें, क्योंकि मच्छरों को जमीन के पास रहना और पैरों पर काटना पसंद होता है। मच्छर बेशक कष्टप्रद लगें, लेकिन तेज हवा में वे भी संघर्ष करते हैं, क्योंकि वे अच्छी उड़ान भरने के काबिल नहीं होते।

©The New York Times 2024

आंकड़े

महिला श्रमबल

आवधिक श्रमबल सर्वेक्षण रिपोर्ट के अनुसार, देश में महिला श्रमबल की भागीदारी दर 2023 में 4.2 प्रतिशत बढ़कर 37 फीसदी हो गई है।

आंकड़े 15 वर्ष और उससे अधिक आयु की महिलाओं के | स्रोत: PLFS

पुंडरीक को नारद जी ने भगवान के नाम की महिमा और जाप का मंत्र बताया। पुंडरीक भक्ति में इतने लीन हुए कि भगवान विष्णु को दर्शन देने आना पड़ा।

पुंडरीक को साथ ले गए भगवान

अंतर्यात्रा
संकलित

भक्त पुंडरीक शास्त्र व वेदों में पारंगत थे। वह भगवान विष्णु के उपासक थे। एक बार वह शालग्राम गांव पहुंचे। वहां उन्होंने स्नान कर भगवान का ध्यान किया। फिर वह वहीं रहकर भगवान विष्णु की भक्ति करने लगे।

उनकी भक्ति से प्रसन्न होकर भगवान विष्णु ने देवर्षि नारद से कहा कि पुंडरीक को भक्ति का उपदेश दें। नारद जी ने पृथ्वी पर आकर पुंडरीक को दर्शन दिए। उन्होंने नारद जी को प्रणाम कर कहा, हे प्रभु! मैंने आज तक किसी का इतना दिव्य रूप नहीं देखा, आप कौन हैं? नारद जी ने कहा कि मैं भगवान वासुदेव का दास हूं। फिर पुंडरीक नारद जी को पहचान गए।

नारद जी ने पुंडरीक को भगवान की भक्ति और उनके नाम की महिमा बताते हुए कहा कि आप 'ऊं नमो नारायणाय' मंत्र का जाप करें। इससे आपकी भक्ति और दृढ़ होगी। पुंडरीक भगवान की भक्ति में लीन हो गए। उनकी भक्ति से प्रसन्न भगवान विष्णु को दर्शन देने के लिए आना पड़ा। उन्होंने पुंडरीक से कहा कि बताओ, क्या चाहिए? पुंडरीक ने कहा, प्रभु, जो भी उचित समझें, वह दीजिए। भगवान उनकी भक्ति से इतने प्रसन्न थे कि उन्हें अपने साथ लेकर चले गए।

28 जून को छपी कथा 'नारद ने वाल्मीकि को दिया मंत्र' के कुछ शब्दों पर पाठकों ने आपत्ति जताई है। आध्यात्मिक संदेश के लिए प्रकाशित सामग्री की मूल भावना सर्वकल्याण होती है। किसी की भावनाएं आहत हुई हैं, तो हमें खेद है।-सं

अमर उजाला

पुराने पन्नों से — 15 मई, 1950

प्रतिबंध हटने के बाद बढ़ी संघ की शक्ति : गोलवलकर

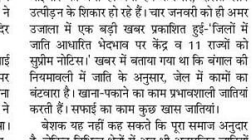

संघी विचारधारा देश को कम्युनिस्ट खतरे से बचायेगी

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सरसंघचालक एमएस गोलवलकर ने बताया कि संघ से रोक हटने के बाद उसकी शक्ति काफी बढ़ गई है। उन्होंने कहा कि केवल संघी प्रवृत्तियां ही देश को कम्युनिस्ट खतरे से बचाएंगी।

सहृदय समाज में हिंसा क्यों

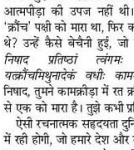

कानूनी संरक्षण प्राप्त होने के बावजूद सामाजिक मानसिकता में बदलाव नहीं होने से दलितों का उत्पीड़न होता है, जिस पर ध्यान देना होगा।

श्यौराज सिंह 'बेचैन'
समाज

'*परहित सरिस धर्म नहिं भाई, पर पीड़ा सम नहिं अधमाई।*'-यह अवधी के महाकवि गोस्वामी तुलसीदास की पंक्ति है, लेकिन उनसे सदियों पूर्व आदिकवि वाल्मीकि के मुखारविंद से व्यक्त हुई थी पहली कविता। हालांकि वह उनकी आत्मपीड़ा की उपज नहीं थी। बहेलिया ने तो तीर 'क्रौंच' पक्षी को मारा था, फिर कविवर क्यों कराह उठे थे? उन्हें कैसे बेचैनी हुई, जो श्लोक रचने लगे- '*मा निषाद प्रतिष्ठां त्वंगमः शाश्वतीः समाः। यत्क्रौंचमिथुनादेकं वधीः काममोहितम्॥*' अर्थात-'हे निषाद, तुमने कामक्रीड़ा में रत क्रौंच पक्षियों के जोड़े में से एक को मारा है। तुझे कभी प्रतिष्ठा नहीं मिलेगी।'

ऐसी रचनात्मक सहृदयता दुनिया के कम ही समाजों में रही होगी, जो हमारे देश और समाज में रही है। परंतु आज क्रूरता/अनुदारता और परपीड़ा को सहज सामान्य मानकर हम मानवीय संवेदना को कितने युगों पीछे छोड़ चुके हैं, इसकी कोई चिंता किसी को होती दिखाई

नहीं पड़ती है। जीव-जंतुओं, नदियों, पेड़ों-पक्षियों की पूजा करने वाला और चींटियां एवं चिड़ियों को चुगाने वाला, कन्याएं जिमाने वाला समाज परजाति प्रेम या परजाति हित के विरुद्ध इतना असहिष्णु कैसे हो जाता है? संसार की संपूर्ण मानव-सृष्टि अभेद है। सब मनुष्य नैसर्गिक रूप से एक ही जाति के हैं।

ईश्वर-कृत, कोई भेदभाव नहीं है, मनुष्य ने स्वयं प्रेम, सहयोग और सहानुभूति जैसे उदार भावों का अंत कर दिया है, जो रोजमर्रा की क्रूर और हिंसक घटनाओं से प्रकट हो रहा है। मसलन, ऑनर किलिंग (आन के लिए हत्या) के मामले में हरियाणा की हिसार पुलिस ने मीना और उसके पति तेजवीर की हत्या के जुर्म में मीना के भाई सचिन, जो बारहवीं कक्षा में कंप्यूटर शिक्षा ले रहा है और स्कूल छोड़ चुके उसके ममेरे भाई राहुल को गिरफ्तार किया है। ये दोनों इसी वर्ष मतदान करने योग्य हुए हैं। पोस्टमार्टम से पता चला है, इन्होंने पांच गोलियां तेजवीर को मारीं और दो बहन को। गौरतलब है कि 22 अप्रैल, 2024 को मीना ने परिवार की मर्जी के खिलाफ आर्य समाज मंदिर (गाजियाबाद) में तेजवीर से शादी की थी।

दादरी से भी ऐसी ही एक सनसनीखेज खबर आई कि एक दलित महिला का अंतिम संस्कार रोकने पर इलाके में तनाव की स्थिति पैदा हो गई। सूचना मिलने पर जिलाधिकारी, पुलिस अधीक्षक आदि ने मौके पर पहुंच कर अंततः अंतिम संस्कार कराया। इससे पहले भी ऐसी घटनाएं हुई हैं और ये करुण-कहानियां किसी एक-दो गांव की नहीं हैं। अकेले उत्तर प्रदेश में ऐसे दर्जनों गांव हैं, जहां दलितों के परंपरागत श्मशानों की जमीनों पर दबंगों ने कब्जा किया और गैर-दलितों के श्मशानों में उनके शवों का दाह-संस्कार रोक दिया गया।

अनुदारता, क्रूरता और असहिष्णुता की चपेट में सद्भाव और प्रेम-सौहार्द की चिंदियां उड़ती दिखाई पड़ती हैं। देववंद गंगदासपुर गांव में मजदूरी मांगने पर अनुसूचित जाति के एक युवक से पंचायत में उठक-बैठक लगवाने, जाति सूचक अपशब्दों का इस्तेमाल करने का मामला 'भीम आर्मी' के कार्यकर्ताओं के सामने आया। इसी वर्ष चार जनवरी को एक खबर प्रकाशित हुई थी-'वाराणसी में घर बुलाकर प्रेमी को पेड़ से बांधा, फिर पेट्रोल डाल कर जिंदा जलाया।' यह घटना चोलापुर थाना क्षेत्र के टिसौरा गांव की है।

इन मामलों में कानून अपना काम करेगा, लेकिन चिंता का विषय है कि हमारे सामाजिक सौहार्द और भाईचारे को क्या हो गया है। कमजोर, दलित लोग उत्पीड़न के शिकार हो रहे हैं। चार जनवरी को ही अमर उजाला में एक बड़ी खबर प्रकाशित हुई-'जिलों में जाति आधारित भेदभाव पर केंद्र व 11 राज्यों को सुप्रीम नोटिस।' खबर में बताया गया था कि बंगाल की नियमावली में जाति के अनुसार, जेल में कामों का बंटवारा है। खाना-पकाने का काम प्रभावशाली जातियां करती हैं। सफाई का काम कुछ खास जातियां।

बेशक यह नहीं कह सकते कि पूरा समाज अनुदार है, लेकिन विभिन्न क्षेत्रों में अब भी अनुसूचित जातियों के प्रति सामंती अनुदारता कायम है। निश्चित रूप से उन्हें कानूनी संरक्षण प्राप्त है, लेकिन सामाजिक मानसिकता में परिवर्तन अब भी नहीं आया है। इसलिए युगीन सामाजिक-सांस्कृतिक सुधार कार्य उतने ही जरूरी हैं, जितने राजनीतिक उपाय।

-लेखक साहित्यकार एवं दिल्ली विश्वविद्यालय के वरिष्ठ प्रोफेसर हैं।

दैनिक जागरण
अंतरात्मा की आवाज उचित-अनुचित का भेद बताती है

व्यर्थ का शोर-शराबा

लोकसभा चुनाव के बाद संसद का विशेष सत्र जिस तरह समाप्त हुआ, उससे सत्तापक्ष और विपक्ष के बीच टकराव की आशंका बढ़ गई है। इस टकराव से केवल संसद की गरिमा ही प्रभावित नहीं होगी, बल्कि संसदीय कामकाज को सही तरह से संचालित करना भी कठिन होगा। इसके आसार इसलिए दिख रहे हैं, क्योंकि पिछले दो-तीन दिनों में लोकसभा और फिर राज्यसभा में एक नहीं अनेक निराशाजनक और संसद की गरिमा गिराने वाले दृश्य देखने को मिले। चूंकि इस बार लोकसभा में कांग्रेस और उसके सहयोगी दल अपना संख्याबल बढ़ाने में समर्थ रहे, इसलिए इसकी पूरी संभावना थी कि विपक्ष कहीं अधिक उत्साहित दिखेगा, लेकिन इसकी आशा कम ही थी कि यह उत्साह अनावश्यक आक्रामकता के रूप में नजर आएगा। दुर्भाग्य से ऐसा ही नजर आया और इसकी शुरुआत तभी हो गई, जब लोकसभा में नेता प्रतिपक्ष के रूप में राहुल गांधी ने अपने पहले ही संबोधन में सत्तापक्ष को विभिन्न मुद्दों पर कठघरे में खड़ा करने की कोशिश में प्रधानमंत्री पर व्यक्तिगत आक्षेप किए। वह हिंदुओं को अपमानित करने से भी नहीं चूके। उन्होंने बलिदानी अग्निवीरों के स्वजनों को मुआवजा देने के मामले में भी गलतबयानी की और एमएसपी को लेकर भी। इसी कारण उनके संबोधन के कई अंश सदन की कार्यवाही से निकालने पड़े।

राहुल गांधी के असंसदीय रवैये के बाद भी सत्तापक्ष ने उन्हें अपेक्षाकृत शांति से सुना, लेकिन जब प्रधानमंत्री के बोलने की बारी आई तो विपक्ष लगातार नारेबाजी करता रहा। इसके चलते उन्हें सुनना कठिन हो गया। चूंकि राहुल गांधी टकराव की राह पर चल निकले थे, इसलिए सत्तापक्ष की ओर से भी विपक्ष पर तंज कसे गए। इससे कटुता बढ़ी। आमतौर पर राज्यसभा के बारे में यह धारणा है कि यहां अपेक्षाकृत धीर-गंभीर चर्चा होती है, लेकिन यह धारणा पहले ही ध्वस्त हो चुकी है। इस बार यह और ध्वस्त होती दिखी। राज्यसभा में विपक्ष ने प्रधानमंत्री को सुनने के बजाय सदन का बहिष्कार कर बाहर नारेबाजी करना बेहतर समझा। संसद के अगले सत्र में सत्तापक्ष एवं विपक्ष के बीच की कटुता और बढ़ सकती है। बेहतर हो कि दोनों पक्ष यह समझें कि संसद में हंगामा और नारेबाजी होते रहने से किसी को कुछ भी हासिल नहीं होता। संसद इसलिए नहीं चलनी चाहिए कि वहां व्यर्थ का शोर-शराबा और हंगामा देखने को मिलता रहे। इसमें कम से कम आम जनता की कोई दिलचस्पी नहीं। आखिर विपक्ष हंगामा करने के बजाय सरकार से जवाब-तलब करने की रणनीति क्यों नहीं अपनाता? निःसंदेह ऐसी कोई रणनीति तभी कारगर हो सकती है, जब वह संसदीय परंपराओं का पालन करे और अपनी बात कायदे से कहे। ऐसा करके ही वह सरकार को जवाब देने और उसे कठघरे में खड़ा करने में सफल हो सकता है। यह निराशाजनक है कि वह यह दिखा रहा है कि उसकी रुचि तो केवल सरकार को नीचा दिखाने में है।

ध्यान दें अभिभावक

बहुत ही चिंता की बात है कि बच्चे उग्र और हिंसक होते जा रहे हैं। मन के खिलाफ कोई भी बात होने पर बच्चे तीखी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हैं। सामान तोड़ने-फोड़ने, मारपीट करने से आगे बढ़कर कुछ ऐसे मामले भी सामने आ रहे हैं, जब वे किसी की हत्या तक कर दे रहे। बिहार के सहरसा में खेल-खेल में हुए विवाद में 12 वर्षीय बच्चे ने अपने हमउम्र साथी की हत्या कर दी। लखीसराय में सहपाठियों के चिढ़ाने से आजिज सातवीं के छात्र ने तीन साथियों को चाकू घोंपकर घायल कर दिया। इतनी कम उम्र में इतना ज्यादा गुस्सा! यह अति है और समाज के लिए चिंतन का महत्वपूर्ण बिंदु भी। किसी भी बच्चे के लिए उसकी पहली पाठशाला उसका घर होता है और प्रथम गुरु उसके मां-बाप। जाहिर तौर पर बच्चे अगर हिंसक हो रहे हैं तो उनके मां-बाप भी इसके लिए दोषी हैं। भागती-दौड़ती दुनिया में अभिभावक बच्चों पर सही से नजर नहीं रख रहे, उनके साथ समय नहीं बिता पा रहे। दिन-रात हाथ में मोबाइल पकड़े बच्चे अपनी दुनिया में खोए रहते हैं। एआइ की दुनिया में वह एक बार मोबाइल पर अपनी पसंद की चीज देखते नहीं कि फिर उसी अनुरूप वीडियो और रील्स मोबाइल पर आते रहते हैं। मन मुताबिक दुनिया का नशा ऐसा है कि अगर अभिभावक टोका-टोकी करें तो बच्चे उन्हें अपना दुश्मन समझने लगते हैं। यहां से बच्चों की खीझ बढ़ती है। मन से इतर कुछ भी होना बच्चे बर्दाश्त नहीं करते हैं और हिंसक रूप अख्तियार कर लेते हैं। जरूरी है कि हम बच्चों को समझाएं। उनके साथ वक्त बिताएं, खेलें। उन्हें आउटडोर गेम खेलने को प्रेरित करें। इसके साथ ही वे किसके साथ उठते-बैठते हैं, क्या करते हैं इसपर भी नजर रखें। बच्चों का मन गीली मिट्टी की तरह होता है, कुम्हार की तरह अभिभावकों को उसे सही आकार देने की जरूरत है। इसके साथ ही स्कूल में शिक्षकों को भी बच्चों को संयम का पाठ पढ़ाना चाहिए, उनकी गतिविधियों पर नजर रख अभिभावकों को सचेत करना चाहिए।

केवल कठोर कानून पर्याप्त नहीं

प्रो. कपिल कपूर

सैकड़ों परीक्षा केंद्रों में से यदि दो-चार जगह भी कदाचार हुआ हो तो इससे असंख्य छात्रों के परिश्रम, प्रतिभा और विश्वास के साथ खिलवाड़ होता है

प्रतियोगी परीक्षाओं में गड़बड़ी और पर्चा लीक होने के मामले पहले भी सामने आए थे, लेकिन इस बार जिस तरह राष्ट्रीय परीक्षा एजेंसी यानी एनटीए की ओर से कराई जाने वाली कई परीक्षाओं और विशेष रूप से मेडिकल कालेजों में प्रवेश की परीक्षा यानी नीट में कदाचार एवं अव्यवस्था ने गंभीर रूप ले लिया, वह चिंता की बात है। वास्तव में परीक्षाओं की विश्वसनीयता पर संदेह पैदा होना राष्ट्रीय चिंता का विषय है। सरकार ने कुछ तात्कालिक कदम उठाए हैं। एनटीए के उच्चाधिकारी को हटाया गया है, नीट पर्चा लीक मामले की जांच सीबीआइ को सौंपी गई है और उसने कई लोगों को गिरफ्तार भी किया है। प्रतियोगी परीक्षाओं के प्रश्नपत्र लीक होने से रोकने के लिए एक नया कानून भी लागू किया गया है, लेकिन क्या ये कदम छात्रों और अभिभावकों की परेशानी दूर कर सकेंगे? ये सभी कदम संतोष की बात हो सकते हैं, लेकिन यह कवायद मात्र रोग के लक्षणों का उपचार करना है। मूल समस्या कहीं अधिक गहरी है, जिसे राजनीति से ऊपर उठकर देखने की जरूरत है। इसलिए और भी, क्योंकि राज्य सरकारों की ओर से आयोजित प्रतियोगी परीक्षाओं के प्रश्नपत्र भी लीक होते रहते हैं और उनसे भी लाखों छात्र प्रभावित हुए हैं। संसद में सभी दलों के जिम्मेदार नेताओं को मिलकर इस पर विचार करना चाहिए। इस विषय को दलीय राजनीति की उठापटक से अलग रखकर गहन मंथन से ही समाधान मिल सकेगा। इसमें सत्तापक्ष और प्रतिपक्ष दोनों को गंभीरता दिखानी होगी। सभी दलों को विशेषकर सत्तारूढ़ दल को देश के सबसे गंभीर प्रश्नों पर दलबंदी के घेरे से उठकर विचार-विमर्श की मर्यादा बनानी चाहिए। शिक्षा और संस्कृति ऐसे ही विषय हैं।

शिक्षा, परीक्षा एवं प्रतिभाओं का चयन-प्रशिक्षण और सुयोग्य युवाओं को उचित स्थान देना देश के प्रत्येक वर्ग के हित में है। सभी दलों के छोटे-बड़े नेताओं, कार्यकर्ताओं के बाल-बच्चे, संबंधी, मित्र-पड़ोसी भी इससे प्रभावित होते हैं। अतः हर हाल में ऐसी समस्याओं को दलबंदी का मुद्दा बनाना बुद्धिमानी नहीं है। शिक्षा को राष्ट्रीय महत्व का विषय मानना इससे जुड़ी समस्याओं के वास्तविक और पुख्ता समाधान के लिए एक पूर्वनिर्धारित शर्त जैसा है। इतने बड़े स्तर पर और तरह-तरह की प्रतियोगी परीक्षाओं का आयोजन एक ही केंद्रीय एजेंसी से कराने में तमाम समस्याएं जुड़ी हैं। देश भर में हजारों-हजार लोगों की भागीदारी से ही इनका आयोजन होता है। यदि ऐसे कार्यों में किसी पवित्रता की भावना न हो तो तरह-तरह के निहित स्वार्थी लोग इसे भी अन्य व्यापार-धंधों की तरह एक लाभ का व्यवसाय भर मान लेते हैं। सैकड़ों परीक्षा केंद्रों में से यदि दो-चार जगह भी कदाचार हुआ तो असंख्य छात्रों के परिश्रम, प्रतिभा और विश्वास के साथ खिलवाड़ होता है। इस प्रकार, यह एक आम सामाजिक चरित्रहीनता का मामला भी बनता है, जिसे केवल कठोर कानून के भरोसे ठीक करने का प्रयास कारगर नहीं हो सकेगा।

अवधेश राजपूत

बाबा साहेब डा. भीमराव आंबेडकर ने देश के संविधान के लोकार्पण के अवसर पर बहुत सारगर्भित टिप्पणी की थी। उन्होंने कहा था कि कैसा भी उत्तम संविधान या विधान क्यों न बना लिया जाए, उसका परिणाम उन लोगों के चरित्र और योग्यता पर निर्भर करेगा, जो उसे लागू करेंगे और करवाएंगे। इस अमृत वचन को हमारे नेताओं और नीति निर्माताओं को सदैव गांठ बांधकर रखनी चाहिए। उन्हें समझना होगा कि हर महत्वपूर्ण स्थान, संस्थान और एजेंसी के कार्य तभी उत्तम स्तर के होंगे, जब सर्वोत्तम एवं सुयोग्य व्यक्तियों को उनकी जिम्मेदारी दी जाए। इसका शिक्षा क्षेत्र में सर्वाधिक ध्यान रखना आवश्यक है, जिससे अंततः सभी अन्य क्षेत्र स्वतः प्रभावित होते हैं। विदेश में भारत की छवि भी इससे जुड़ी है। चूंकि देश में भी अच्छी स्कूली शिक्षा, बेहतर उच्च शिक्षा और उत्तम प्रशिक्षण की संस्थाओं से ही हर क्षेत्र को अपने अधिकारी एवं कर्मचारी मिलते हैं, इसलिए हमें और सतर्क रहना होगा। शिक्षा क्षेत्र को पवित्र क्षेत्र मानकर ही हमारे नेताओं और अधिकारियों को काम करने की जरूरत है। इसे राजनीति, गुटबाजी, निजी स्वार्थ अथवा दल या संगठन के स्वार्थ-साधन से मुक्त करना समय की आवश्यकता है। यही वह बिंदु है, जहां सत्तापक्ष और प्रतिपक्ष को सच्ची उदारता और राष्ट्रीय भावना रखने की अपरिहार्य आवश्यकता है। आशा करें कि संसद में जब इस विषय पर बहस हो तब सबके बीच यह भावना दिखे। हमारे नेताओं एवं नीति-नियंताओं को कम से कम शिक्षा क्षेत्र को स्वार्थी राजनीति, संकीर्णता और लोभ से मुक्त रखने का प्रण लेना चाहिए। यह लाखों बच्चों, युवाओं, और उनके अभिभावकों के विश्वास की रक्षा करने का भी विषय है। नेता इस पर सच्ची भावना दिखाएंगे तो पूरे समाज को भी बल मिलेगा। शिक्षा के क्षेत्र में सक्रिय धंधेबाजों, दलालों आदि पर अंकुश लगाना आवश्यक ही नहीं, अपितु अनिवार्य हो चला है।

शिक्षा का विषय केंद्र-राज्य संबंधों से भी जुड़ा हुआ है। शिक्षा और संस्कृति के मामले विकेंद्रित रखने पर विचार होना चाहिए। भारत जैसे विशाल देश में हर चीज का केंद्रीकरण करके गुणवत्ता की गारंटी सुनिश्चित करना कठिन है। अतः हर क्षेत्र और विभाग के विशिष्ट संस्थानों में कार्य-भार बांटकर गुणवत्ता सुनिश्चित करने और आदर्श बनाकर दिखाने को प्रोत्साहन देने पर विचार करना चाहिए। इसे खानापूरी नहीं, अपितु अच्छी शिक्षा, अच्छी परीक्षा, अच्छा प्रशिक्षण और अच्छे शिक्षकों-व्यवस्थापकों को सम्मानित करने का भी ध्यान करना चाहिए। इससे अच्छे परिणाम मिल सकते हैं। इस पूरे प्रसंग में दुनिया के अग्रणी देशों के मानक और आदर्श चलन से भी सीखना उपयोगी हो सकता है। विकेंद्रित व्यवस्था से ही दुनिया के देशों में विश्वप्रसिद्ध शैक्षिक, तकनीकी और प्रबंधन संस्थान बने और उनका विस्तार हुआ है। दूसरी ओर, कम्युनिस्ट देशों में हर चीज का केंद्रीकरण करने से अधिकांश क्षेत्रों में गुणवत्ता चौपट हुई थी। अतः हमारे नेताओं और नीति-निर्माताओं को देश-विदेश के सच्चे गुणियों और विशेषज्ञों से सलाह लेकर शिक्षा क्षेत्र की विभिन्न समस्याओं का समाधान करना चाहिए। इसमें जल्दबाजी या त्वरित समाधान की अधीरता से बचना चाहिए।

(लेखक जेएनयू में प्रोफेसर एवं डीन के साथ भारतीय उच्च अध्ययन संस्थान के अध्यक्ष भी रहे हैं)

response@jagran.com

संसद की गरिमा बचाने की कठिन चुनौती

गिरीश्वर मिश्र

बीते कुछ समय से सड़क पर राजनीतिक दमखम दिखाने वाले नजारे संसद के दोनों सदनों में भी दिखने लगे हैं

पूरे देश की जनता ने बड़ा भरोसा जताते हुए अपने प्रतिनिधियों को चुनकर 18वीं लोकसभा में भेजा है, ताकि वे सांसद के रूप में देश की भलाई के लिए नीति एवं नियम बनाएं, उसे लागू कराएं और जनजीवन को सुरक्षित तथा खुशहाल बनाएं। संसद की सदस्यता की शपथ लेते समय सांसदगण इन सब बातों को ध्यान में रखने की कसम भी खाते हैं। कहना न होगा कि देश की संसद लोकतंत्र के वैचारिक शिखर और देश की संप्रभुता को रेखांकित करती है। इसलिए इसकी गरिमा बनाए रखना सभी सांसदों का मूल कर्तव्य बन जाता है। इसके लिए जनप्रतिनिधियों से यह अपेक्षा होती है कि वे संसद की बैठकों में नियमित भाग लेंगे, अपना आचरण शुद्ध एवं व्यवस्थित रखेंगे और व्यर्थ की बयानबाजी की जगह सार्थक बहस करेंगे। चूंकि जनता के समर्थन से ही वे सांसद का दर्जा पाते हैं इसलिए संसद तक पहुंचने पर उनको सिर्फ और सिर्फ आम जनता की नुमाइंदगी ही करनी चाहिए। यही उनका फर्ज बनता है। लोकसभा की सदस्यता पांच साल की और राज्यसभा की छह साल की होती है। इस अवधि के दौरान सांसदों से अपना लोक-दायित्व निभाना अपेक्षित होता है। संसद के बजट, मानसून और शीतकालीन-तीन मुख्य सत्र होते हैं। संसदीय बैठक में प्रश्नकाल और शून्यकाल की व्यवस्था भी होती है, जो सांसदों को भागीदारी का अवसर देती है। सांसदों की उपस्थिति अक्सर समस्या होती है। इसे सुनिश्चित करने के लिए खास मौकों पर जब सदन में किसी विषय पर मतगणना की जरूरत पड़ती है तो सांसदों की घेरेबंदी भी करनी पड़ती है। उनको पकड़ में बनाए रखने के लिए पार्टियों द्वारा ह्विप जारी किया जाता है।

पहली लोकसभा में हर साल 135 दिन बैठकें आयोजित हुई थीं। आज स्थिति कितनी नाजुक हो गई है, इसका अनुमान इसी से लगा सकते हैं कि पिछली यानी सत्रहवीं लोकसभा में 2014-19 के बीच हर साल औसतन 55 दिन ही बैठकें आयोजित हुईं। यह दुखद है कि 1952 के बाद सबसे कम संसदीय काम सत्रहवीं लोकसभा में हुआ। 35 प्रतिशत बिल एक घंटे से कम की चर्चा के बाद पास हुए। अब तो बिल स्टैंडिंग कमेटी के पास भी नहीं जाते। पिछली लोकसभा के काल में कुल 16 प्रतिशत बिल ही उसके पास विचार के लिए भेजे गए। सांसदगणों ने

राज्यसभा से बाहर नारे लगाते विपक्षी सांसद। एएनआइ

729 निजी बिल प्रस्तुत किए, जिनमें से केवल दो पर ही विचार हुआ। और तो और डेढ़ सौ सांसद निलंबित भी हुए थे। औसतन सांसदों ने 45 बहसों में भाग लिया। केवल दो सांसद ही शत प्रतिशत उपस्थित रहे। 120 सांसदों की उपस्थिति ही 90 प्रतिशत से अधिक थी। राहुल गांधी की उपस्थिति पिछली लोकसभा में 51 प्रतिशत ही थी। अब तो विपक्ष भी अपनी जिम्मेदारी से विमुख होता दिख रहा है। वह सरकार को घेरने और आरोपित करने के उद्देश्य से संसद के कार्य में अक्सर व्यवधान डालता है। लगता है विपक्ष का मकसद यही हो गया है कि संसद की कार्यवाही सुचारु रूप से न चल सके और सरकार की विफलता दर्ज हो।

भारत की परंपरा कहती है कि वह सभा, सभा नहीं, जिसमें कोई वृद्ध न हो। वे वृद्ध, वृद्ध नहीं, जो धर्म की बात न बोलते हों। वह धर्म, धर्म नहीं, जिसमें सत्य न हो। वह सत्य, सत्य नहीं जो कपटपूर्ण हो। आज संसदीय सौंध में वृद्ध महानुभावों की संख्या कम है और सत्य की तो बात ही भूल जाएं। आज नई भारतीय संसद की औसत आयु 56 वर्ष है, जो सत्रहवीं की तुलना में तीन वर्ष कम है। 80 प्रतिशत सांसद स्नातक या उससे अधिक की शिक्षा प्राप्त हैं। आपराधिक पृष्ठभूमि से नाता घना होता गया है। आज 46 प्रतिशत सांसदों पर आपराधिक मामले दर्ज हैं। 25 सांसद सौ करोड़ से अधिक की घोषित संपत्ति के स्वामी हैं। गौर करने की बात है कि संसद को चलाने का खर्च लगभग 2.5 लाख रुपये प्रति मिनट का आता है। इसलिए इस समय का सदुपयोग होना चाहिए। सार्थक और उत्पादक संवाद के लिए हर सांसद को संविधान का ज्ञान और संसदीय परंपराओं की जानकारी भी होनी चाहिए। दुर्भाग्य से बहुत कम सांसद ही इस ओर ध्यान देते हैं। मुखर प्रवक्ता के रूप में विपक्ष के कई सांसद अक्सर बेलगाम आरोप-प्रत्यारोप दर्ज कराने में जुट जाते हैं। आधी-अधूरी सूचनाओं या गलत जानकारी के साथ विपक्ष के नेता गण सरकारी पक्ष को आरोपित करने में जुट जाते हैं।

बीते कुछ समय से धरना-प्रदर्शन के साथ सड़क पर राजनीतिक दमखम दिखाने वाले नजारे संसद के दोनों सदनों में भी दिखने लगे हैं। भौतिक रूप से छीना-झपटी और हाथापाई की नौबत भी दिखती रही है और विचाराधीन विषय से दूर एक-दूसरे को हीन साबित करना ही उद्देश्य बन गया है। कई सांसद बिना आवश्यक तैयारी के आते हैं तो कई बड़े नाटकीय अंदाज में अपना वक्तव्य रखते हैं। संसद को इस समस्या से निजात दिलाने की कोई पुख्ता व्यवस्था होनी चाहिए। इस बार संख्याबल की दृष्टि से विपक्ष पहले की तुलना में अधिक ताकतवर है। यह संसदीय बहसों के स्तर को वैचारिक दृष्टि से समृद्ध करने वाला हो सकता है, बशर्ते खुले मन से बातचीत हो। आशा है कि नए-पुराने सभी सांसद अपने उत्तरदायित्व को समझेंगे और कामकाज के प्रति सकारात्मक और गंभीर रुख अपनाएंगे। संसद में वाद-विवाद तो होंगे, पर कटुता की जगह विमर्श और विचार की गंभीरता से ही लोकतंत्र की शक्ति बढ़ेगी। दलगत पसंद और नापसंद स्वाभाविक है, किंतु उससे ऊपर उठकर रचनात्मक भूमिका निभाने का साहस भी जरूरी है। याद रहे कि संसद का संचालन किसी एक की नहीं, पक्ष-विपक्ष दोनों की साझा जिम्मेदारी होती है। दोनों के ध्यान के केंद्र में अंततः सुशासन और लोक कल्याण ही होना चाहिए। न भूलें कि प्रजा के सुख में ही राजा का भी सुख निहित होता है।

(लेखक शिक्षाविद् एवं पूर्व कुलपति हैं)

response@jagran.com

ऊर्जा

शक्ति का स्रोत मन

संपूर्ण संसार में यदि सर्वाधिक शक्तिशाली कोई है, तो वह है मन। मन को किसी ने देखा नहीं है, किंतु मन के अंदर शक्तियों का अपार भंडार विद्यमान है। एक सूक्ति है, 'मन के हारे हार है मन के जीते जीत।' मन के अंदर असीम संभावनाएं विद्यमान हैं। जिस प्रकार हम पदार्थ के सूक्ष्मतम कण अर्थात परमाणु को नहीं देख पाते, किंतु उसमें अपार ऊर्जा सन्निहित है, ठीक उसी प्रकार मन भी कोई भौतिक वस्तु नहीं है, जिसके दर्शन कर पाना संभव हो। मन हमारे भौतिक शरीर से संबद्ध एक ऐसा भाग है, जिसका केवल अनुभव किया जा सकता है। मन के अस्तित्व के बिना शरीर का अस्तित्व भी पूर्णतया अर्थहीन होता है।

मन को शरीर का सारथी कहा गया है, क्योंकि शरीर पूर्णतया मन के अधीन रहता है। यह मन की शक्तियों का ही परिणाम है कि शरीर बड़े-बड़े लक्ष्यों को सिद्ध कर लेता है। अनेक ऐसे कारक हमारे चहुंदिश विद्यमान रहते हैं, जो मन को सदैव पतन की ओर अग्रसर करने के लिए प्रवृत्त होते हैं। बाह्य संसार, विभिन्न प्रकार के अनुभव, विषम परिस्थितियां, विभिन्न प्रकार के आवेग एवं भाव इत्यादि कुछ ऐसे ही कारक हैं, किंतु इन सभी कारकों के प्रभाव को आत्मबल की सहायता से निष्क्रिय किया जा सकता है।

आत्मबल से युक्त मन संसार का सर्वशक्तिमान अस्त्र है। आत्मबल को जगाने के लिए हमें अनावश्यक बाह्य तत्वों के फंदे से स्वयं को बाहर निकालना होगा। इसके लिए आवश्यक है कि हम अपना पूर्ण ध्यान स्वयं पर केंद्रित करें। ऐसा होने पर बाह्य कारक, जो हमें विचलित करने का प्रयास करते रहते हैं, हमारे ऊपर लेशमात्र प्रभाव भी नहीं डाल पाएंगे। हमें मन की शक्ति को पहचानते हुए अपने प्रत्येक लक्ष्य को मन के हवाले करके अपने आत्मबल का स्तर निरंतर ऊपर उठाने का प्रयास करते रहना चाहिए। ऐसा होते ही हम अपने जीवन में एक अभूतपूर्व परिवर्तन देखेंगे।

प्रेरणा अवस्थी

सहअस्तित्व की भावना से बचेगी दुनिया

गुंजन मिश्रा

वसुधैव कुटुंबकम् के सिद्धांत की आवश्यकता इसलिए भी है, क्योंकि आज दुनिया बहुत ज्यादा बंटी हुई है

सहअस्तित्व की भावना को भूलकर विकास के नाम पर कौन कितना पैसा संचय कर सकता है लोगों में इस बात की होड़ मची हुई है। आज जो धरती के संसाधनों को जितना दोहन कर रहा है उसको समाज से उतना अधिक सम्मान मिल रहा है, जबकि होना चाहिए इसके विपरीत। सच तो यह है कि हम अपने जीवन के लिए जरूरी आधारों को नष्ट कर रहे हैं। सहअस्तित्व की भावा को नकार कर प्रकृति के संसाधनों को निचोड़ने के कारण ही हम आज जलवायु परिवर्तन की वैश्विक समस्या का सामना कर रहे हैं।

वैश्विक समस्याओं को सुलझाने के लिए आज सभी देशों को भारत के वसुधैव कुटुंबकम् के सिद्धांत पर चलना चाहिए, अन्यथा हम धरती पर जीवन को समाप्त होने से नहीं बचा पाएंगे। वसुधैव कुटुंबकम् का अर्थ है ''विश्व एक परिवार है''। यह प्राचीन भारतीय विचार है, जो सार्वभौमिक भाईचारे और एकता की भावना को बढ़ावा देता है। वसुधैव कुटुंबकम् का दर्शन हमें यह याद दिलाता है कि हम हम सभी एक-दूसरे से जुड़े हुए हैं। यह हमें अपने पड़ोसियों और दुनिया भर के लोगों के प्रति दया और करुणा के साथ व्यवहार करने के लिए प्रेरित करता है। इसीलिए आज की जरूरत इस सिद्धांत को अपनी रोजमर्रा की जिंदगी में शामिल करने की है तभी हम धरती को जीवन के लायक बना पाएंगे। जो देश विकसित या समृद्ध हैं उनको आगे आकर इसको अपनाना चाहिए।

वसुधैव कुटुंबकम् के सिद्धांत की आवश्यकता इसलिए भी है, क्योंकि आज दुनिया बहुत ज्यादा बंटी हुई है। स्पष्ट है ये तेरा, ये मेरा कहने वाले बहुत छोटा सोच रखते हैं। उदार हृदय वालों के लिए धरती एक पूरा परिवार है। इसलिए संयुक्त राष्ट्र को इस सिद्धांत को विश्व स्तर पर बढ़ावा देना चाहिए। अगर संभव हो तो संयुक्त राष्ट्र अपने लेटर पैड पर इसको स्थान दे, ताकि अन्य देश भी इस विचार को अपनाएं। वसुधैव कुटुंबकम् हमें सभी के साथ दया और सहानभूति के साथ व्यवहार करना सिखाता है, भले ही उनकी जाति, राष्ट्रीयता और पंथ कुछ भी हो। वैसे भी ब्रह्मांड में कण-कण को जीवंत माना गया है, इसीलिए हमारा जीवन पूरी तरह से सहअस्तित्व पर निर्भर करता है। प्राकृतिक संतुलन को मानवता के हिसाब से सर्वोच्च कार्य माना जाए, वास्तु विनिमय प्रणाली को लागू कर प्रोत्साहित किया जाए, आर्थिक असमानता आयोग की स्थापना की जाए, कृषि को वैश्विक कार्य घोषित किया जाए, प्राकृतिक वसीयत के लिए पहल की जाए तभी हम एक खुशहाल दुनिया का सपना पूरा करने में सफल होंगे, नहीं तो आज पशु-पक्षी और पेड़-पौधों का जो हाल हो रहा है आने वाले दिनों में वही मानवों का भी होगा। जलवायु परिवर्तन के चलते सबसे ज्यादा पलायन मानवों द्वारा ही किया जाएगा।

(लेखक पर्यावरणविद् हैं)

मिथ्या इतिहास सृजन अभियान

'झूठा इतिहास गढ़ने का षड्यंत्र' शीर्षक से लिखे आलेख में विकास सारस्वत ने वामपंथी इतिहासकारों द्वारा भारतीय इतिहास को अपने वैचारिक सोच के अनुसार विद्रूप करने के भीषण षड्यंत्र को रेखांकित करने का प्रयास किया है। आज हर कोई अपने राजनीतिक और धार्मिक सोच के अनुसार इतिहास गढ़ने के कार्य में लगा हुआ है। इसका नमूना इंटरनेट मीडिया पर आसानी से देखा जा सकता है। यहां दिन-रात झूठे लेख और वीडियो बनाकर जनता को भ्रमित करने का अभियान बिना रोक-टोक धड़ल्ले से चलाया जा रहा है। सामाजिक जागरूकता के नाम पर लोगों को देवी-देवताओं और ब्राह्मणों के खिलाफ भड़काया जा रहा है। आजकल नवबौद्धों के द्वारा खुद को पीड़ित राक्षस तक बताया जा रहा है तथा उन्हें ब्राह्मणों द्वारा प्रताणित करने की कहानियां गढ़ी जाने लगी हैं। हिंदू देवी-देवताओं को खुलेआम गालियां दी जा रही हैं। मुस्लिम आक्रांताओं को सहृदय तथा ब्राह्मणों को क्रूर शासक बताया जा रहा है। दरअसल इस समय सामाजिक क्रांति के नाम पर राजनीतिक हित साधने के लिए लोगों को उद्वेलित करने का काम अपने निकृष्टतम स्तर तक पहुंच चुका है। यदि लोग खुद सचेत नहीं हुए तो निकट भविष्य में पूरे देश को आपसी कटुता और वर्ग संघर्ष की भीषण विभीषिका का दंश झेलना पड़ सकता है। मनमाने इतिहास लेखन के द्वारा इसी वर्ग संघर्ष की पटकथा तैयार की जा रही है।

वेदप्रकाश पांडेय, अंबेडकर नगर, उप्र

मेलबाक्स

धार्मिक आयोजनों पर नियंत्रण जरूरी

हाथरस में सौ से अधिक श्रद्धालुओं की मृत्यु का समाचार हृदयविदारक है। जो इसके लिए दोषी हैं उन पर हत्या की समुचित धाराओं के अंतर्गत कार्रवाई होनी चाहिए। श्रद्धालुओं को भी अपनी पूर्व सुरक्षा का संज्ञान लेना चाहिए। जहां समुचित व्यवस्था और सुरक्षा न हो, वहां नहीं जाना चाहिए। सभी भगदड़ की दुर्घटनाओं में बच्चों और महिलाओं की मौतें अधिक होती हैं। भविष्य में सभी धार्मिक आयोजनों में पूर्व पंजीकृत श्रद्धालुओं को ही प्रवेश की अनुमति रहनी चाहिए जो स्थान के क्षमता के अनुकूल हो। मंदिरों में भी पूर्व पंजीकरण की अनिवार्यता हो जिससे आपदा के समय घायलों और मृतकों की पहचान हो सके। घायलों के इलाज का पूरा खर्च आयोजकों की ही जिम्मेदारी हो और मृतकों के परिवारों को मुआवजे की रकम भी आयोजकों से वसूल हो। स्थानीय प्रशासन भी संख्या सुनिश्चित करके अनुमति प्रदान करे। निकास द्वारों की व्यवस्था भी स्थानीय प्रशासन सुनिश्चित करें।

विनोद जौहरी, दिल्ली

झूठ की राजनीति घातक

लोकसभा में विपक्ष की राजनीति पूरी तरह झूठ पर टिकी नजर आ रही है। एक झूठ का सच उजागर होते ही वह अन्य झूठ लेकर आ जाता है। पीएम मोदी ने लोकसभा में कांग्रेस पर निशाना साधते हुए सही कहा कि जैसे आदमखोर जानवर के मुंह पर खून लग जाता है उसी तरह कांग्रेस के मुंह पर भी झूठ का खून लग गया है। उसने चुनाव में माताओं-बहनों को हर महीने 8,500 रुपये देने का झूठ बोला। देखा जाता है कि विपक्ष के नेता दक्षिण में जाकर उत्तर के लोगों के खिलाफ बोलते हैं। उत्तर में जाकर पश्चिम के लोगों को खिलाफ बोलते हैं। महापुरुषों के खिलाफ भी बोलते देखे जाते हैं। उसने कई बार भाषा के आधार पर बांटने की कोशिश की है। कांग्रेस लगातार तीन बार लोकसभा में 100 सांसदों का आंकड़ा पार नहीं कर पाई है।

युगल किशोर राही, ग्रेटर नोएडा

भूल सुधार

कल के अंक में इस पेज पर 'झूठा इतिहास गढ़ने का षड्यंत्र' शीर्षक से प्रकाशित लेख में फारसी इतिहासकार मिन्हाज अल दीन के भारत आगमन का वर्ष भूलवश 1927 छप गया है। इसे 1227 पढ़ा जाए। असुविधा के लिए खेद है। संपादक

इस स्तंभ में किसी भी विषय पर राय व्यक्त करने अथवा दैनिक जागरण के राष्ट्रीय संस्करण पर प्रतिक्रिया व्यक्त करने के लिए पाठकगण सादर आमंत्रित हैं। आप हमें पत्र भेजने के साथ ई-मेल भी कर सकते हैं।

अपने पत्र इस पते पर भेजें :
दैनिक जागरण, राष्ट्रीय संस्करण,
डी-210-211, सेक्टर-63, नोएडा
ई-मेल : mailbox@jagran.com

संस्थापक-स्व. पूर्णचन्द्र गुप्त, पूर्व प्रधान संपादक-स्व.नरेन्द्र मोहन, नॉन एग्जीक्यूटिव चेयरमैन-महेन्द्र मोहन गुप्त, प्रधान संपादक-संजय गुप्त, जागरण प्रकाशन लि. के लिए: नीतेन्द्र श्रीवास्तव द्वारा 501, आई.एन.एस. बिल्डिंग, रफी मार्ग, नई दिल्ली से प्रकाशित और उन्हीं के द्वारा डी-210, 211, सेक्टर-63 नोएडा से मुद्रित, संपादक (राष्ट्रीय संस्करण) -विष्णु प्रकाश त्रिपाठी*
दूरभाष : नई दिल्ली कार्यालय : 011-43166300, नोएडा कार्यालय : 0120-4615800, E-mail: delhi@nda.jagran.com, R.N.I. No. DELHIN/2017/74721 *इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी। समस्त विवाद दिल्ली न्यायालय के अधीन ही होंगे। हवाई/रेल शुल्क ₹-2 अतिरिक्त।

हिन्दुस्तान
1936
सत्य · सार्थक · सटीक

हाथरस हादसे के सबक

हाथरस में बाबा नारायण साकार के सत्संग में मची भगदड़ में 120 से भी ज्यादा आस्थावान लोगों की मौत दर्दनाक तो है ही, यह हमारे तंत्र और समाज के सभी स्तरों पर आत्मचिंतन का अवसर भी है। विडंबना देखिए, जिन बाबा के दर्शन करने और प्रवचन सुनने आए इतने श्रद्धालु अपनी जान से हाथ धो बैठे, कई सारे जख्मी होकर अस्पतालों में पड़े हैं, वह हादसे के घंटों बाद तक लापता रहे, जबकि उन्हें घायलों की सेवा में जुटना चाहिए था। बहरहाल, संतोष की बात है कि राज्य के मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ ने हादसे के शिकार लोगों के परिजनों व घायल सत्संगियों से मिलकर उनके आहत मन पर मरहम रखने का काम किया है और इस घटना की न्यायिक जांच कराने की घोषणा की है। जो ब्योरे हैं, वे बताते हैं कि हादसे की वजह भी चिर-परिचित है और नारायण साकार के सत्संग में जुटी भीड़ की प्रकृति भी, मगर उसके ठीक-ठीक कारणों को जानने के लिए न्यायिक जांच के नतीजों का इंतजार करना होगा। आशा है, यह जांच जल्द पूरी होगी और इसमें जिम्मेदारियां भी तय की जाएंगी।

दुर्योग से ऐसे त्रासद मौकों पर भी सियासत अपनी निर्ममता नहीं छोड़ती। अभी हाथरस हादसे के सभी मृतकों की शिनाख्त भी नहीं हो पाई थी कि इस पर राजनीतिक आरोप-प्रत्यारोप शुरू हो गए। यह पीड़ादायक है। इसलिए पहला सबक तो हमारे राजनीतिक वर्ग को ही सीखने की जरूरत है कि कई बार मर्यादित मौन ज्यादा अभिव्यंजित होती है। दूसरा सबक हमारे शासन-तंत्र के लिए है कि वह स्थानीय प्रशासन को कैसे ज्यादा से ज्यादा संवेदनशील बनाए? भगदड़ की ऐसी घटनाएं लगातार और देश के लगभग सभी हिस्सों में घटती रही हैं, मगर इनके दोषियों को सजा दिए जाने की कोई नजीर याद नहीं आती और जब ऐसी कोई नजीर ही याद न रहे, तो लापरवाही पर लगाम कैसे लगेगी? ऐसा नहीं कि हमारे तंत्र में सामर्थ्य नहीं। करोड़ों की भीड़ वाले कुंभ मेले सुचारू रूप से आयोजित हो सकते हैं, तो फिर हजारों की भीड़ के लिए व्यवस्था बनाने में क्या दिक्कत हो सकती है? सवाल प्राथमिकता और पेशेवर कार्यशैली की है। हमारे तंत्र में आज भी पेशेवराना कौशल की कमी है।

धर्म-ध्वजा संभालने वाले लोगों की भी जिम्मेदारी बनती है कि वे शासन और तंत्र की मदद करें, तभी किसी सत्संग को कोहराम में बदलने से बचाया जा सकेगा।

देश में ऐसे कई उदाहरण मौजूद हैं कि यदि ईमानदारी से सबक सीखे जाएं, तो जान-माल की पूरी हिफाजत हो सकती है। साल 2004 में आई सुनामी से सीखा गया सबक इसका सबसे बड़ा उदाहरण है। हमने पड़ोसी देशों के साथ मिलकर एक ऐसा सफल तंत्र खड़ा किया है, जिसके कारण अब चक्रवाती तूफान के आने से पहले ही हम लाखों लोगों को तटीय इलाकों से सुरक्षित स्थान पर ले जा पाते हैं। वैसी ही कोई व्यवस्था हाथरस जैसे आयोजनों के लिए अनिवार्य बनाई जानी चाहिए। यह हादसा संत समाज के लिए भी एक सबक है कि वे अपनी टोली में घुस आए अवांछित तत्वों की पहचान कर उनसे भोले-भाले आस्तिकों को सतर्क करें। यह छिपी हुई बात नहीं है कि धर्म के क्षेत्र में चढ़ावे के अर्थशास्त्र ने कई धनलोलुपों की इसमें घुसपैठ करा दी है। धार्मिक आयोजनों में बढ़ता आडंबर प्रशासन के आगे लगातार चुनौतियां बढ़ाता जा रहा है और आस्था एक ऐसा भावनात्मक मसला है कि कई बार प्रशासनिक अधिकारी चाहते हुए भी सख्ती करने से बचते हैं, ऐसे में धर्म-ध्वजा संभालने वाले लोगों की भी जिम्मेदारी बनती है कि वे शासन और तंत्र की मदद करें, तभी किसी सत्संग को कोहराम में बदलने से बचाया जा सकेगा।

हिन्दुस्तान Hindustan | 75 साल पहले 4 जुलाई, 1949

जारशाही से भी बदतर हालत

लंदन, ३ जुलाई। ब्रिटेन के प्रधानमन्त्री श्री एटली ने कल मांचेस्टर में एक सार्वजनिक सभा में भाषण देते हुए कम्यूनिस्टों की कड़ी आलोचना की और उन्हें देशद्रोही, कपटी और गद्दार तक कहा। आपने कहा कि वे लोग, जो सत्ता हाथ में आते ही सारी स्वतन्त्रता का गला घोंट देते हैं, ब्रिटेन में नागरिक स्वतन्त्रता के कथित दमन के विरोध में बराबर प्रस्ताव पास करके भेज रहे हैं और मजे की बात यह है कि अपना उल्लू सीधा करने के लिए वे नारे प्रजातन्त्र के लगाते हैं। श्री एटली ने कहा कि रूस किसी तरह भी सच्चा समाजवादी देश नहीं है। आज उसकी हालत वही है जो जार के समय थी।

प्रधानमन्त्री श्री एटली ने कम्यूनिस्टों की कड़ी आलोचना करते हुए बताया कि भारत, पाकिस्तान, बर्मा और लंका ने जो आजादी प्राप्त की है, वह स्वतन्त्रता के बारे में ब्रिटिश रवैये की एक शानदार मिसाल है। उन लोगों का खास तौर से उल्लेख करते हुए, जो कि अनधिकृत हड़तालें करते या करवाते हैं, प्रधानमन्त्री ने कम्यूनिस्टों और अन्य राष्ट्र विरोधी लोगों पर बहुत जबर्दस्त हमला किया और उन्हें कपटी और जाहिल तक कहकर पुकारा।... श्री एटली ने कई हजार लोगों की सभा में यह घोषणा की कि जो लोग जहाजों को घाटों में रोके रखते हैं, वे न केवल अपने देशवासियों की सबसे बड़ी कुसेवा करते हैं बल्कि उनकी खाद्य-सप्लाई को खतरे में डालते हैं।

सच्चे समाजवाद की दृष्टि से श्री एटली ने रूस को संसार के सबसे पिछड़े हुए देशों में बताया और कहा कि वह पुलिस राज्य है, जैसा कि जार के समय में था, न कि एक समाजवादी राष्ट्र। इस पर हमारे पास उन लोगों की तरफ से लगातार ऐसे प्रस्ताव आ रहे हैं जिनमें कि ब्रिटेन में स्वतन्त्रता के कथित दमन का विरोध किया जाता है और मजे की बात यह है कि ये वे लोग हैं, जो अगर सत्ता में आ जायें तो सारी स्वतन्त्रता का गला घोंटकर रख दें। श्री एटली ने कहा कि ब्रिटेन हर राष्ट्र के अपना शासन स्वयं चलाने के अधिकार में विश्वास रखता है। इस बीच में कुछ गड़बड़ी डालने वालों ने, जिन्हें बाद में सभा से निकाल दिया गया, चिल्लाकर कहा, ''आयरलैंड का क्या हाल है?'' एक और ने पुकारा, ''नागरिक स्वतन्त्रताएं?''

मंगल समागम का अमंगल हो जाना

यहां स्कैन करें
ओपीएस मलिक | सेवानिवृत्त आईपीएस अधिकारी

बड़े आयोजनों की जिम्मेदारी जिला प्रशासन व आयोजक, दोनों की होती है। हालांकि, आयोजकों का इंतजाम उतना प्रभावी नहीं हो सकता, जितना प्रशासन का होता है।

हाथरस की घटना अत्यंत दुर्भाग्यपूर्ण है। आजकल धार्मिक समागमों में अक्सर दुर्व्यवस्था पैदा हो जाती है। बीते कुछ वर्षों में धार्मिक आयोजनों में मची भगदड़ इसकी गवाह है। यहां तक कि सड़क हादसों के शिकार लोगों में भी एक बड़ी संख्या तीर्थयात्रियों की होती है। लिहाजा, इन घटनाओं से जुड़े तमाम आयामों पर हमें गौर करना होगा और समय रहते उचित कदम भी उठाने होंगे।

हाथरस में सत्संग के लिए क्या इंतजाम किए गए थे और क्या नहीं, इस पर अभी बहस होती रहेगी, लेकिन पहली नजर में तो यही लगता है कि आयोजन-स्थल पर प्रभावी इंतजाम नहीं किए गए थे। किसी भी बड़े आयोजन की जिम्मेदारी जिला प्रशासन और आयोजक, दोनों की होती है। हालांकि, आयोजकों का इंतजाम उतना प्रभावी नहीं हो सकता, जितना जिला प्रशासन का होता है। आयोजकों के सेवादार भी एक हद के बाद समस्या बन जाते हैं। मगर जिला प्रशासन आमतौर पर तभी सक्रिय होता है, जब उसके पास ऐसे किसी आयोजन की पूर्व-सूचना पहुंचती है। यह खबर अमूमन आयोजक ही देता है कि वह एक तय तिथि को कार्यक्रम करने जा रहा है। इसमें वह श्रद्धालुओं के पहुंचने की अनुमानित संख्या भी बताता है। इसके बाद जिला प्रशासन की यह जिम्मेदारी होती है कि वह आयोजन-स्थल का मुआयना करके कार्यक्रम पर फैसला ले। वह चाहे, तो पुलिस ऐक्ट के तहत ऐसे आयोजनों को नियमित कर सकता है, अनुमति देने से इनकार कर सकता है या शर्तें तय कर सकता है। मगर मुश्किल यह है कि तमाम धार्मिक आयोजनों में अब तरह-तरह की व्यावसायिक गतिविधियां भी होने लगी हैं। इनमें जितने भक्त आते हैं, उतना ही चढ़ावा चढ़ता है, दान मिलता है व धन का हस्तांतरण होता है। इन सबसे आयोजनों में व्यवस्था के तार-तार होने का डर बना रहता है।

हालांकि, आयोजकों के सिर पर जिम्मेदारी डालकर प्रशासन अपने कर्तव्यों की इतिश्री नहीं कर सकता। अगर किसी आयोजन के लिए उससे अनुमति नहीं भी ली गई होती है और उसमें हजारों-लाखों लोगों के शामिल होने की संभावना जताई जाती है, तो जिला प्रशासन अपने तईं सरकारी अमले का उपयोग करने को स्वतंत्र होता है। यानी, आयोजक अनुमति ले अथवा नहीं, दोनों ही परिस्थितियों में जिम्मेदारी जिला प्रशासन के कंधों पर ही होती है। लिहाजा, उसे स्वतः सुरक्षा इंतजाम करने पड़ते हैं या बंदोबस्त न कर पाने की सूरत में कार्यक्रम रद्द कराने होते हैं। उसको कई तरह की प्रशासनिक ताकत इसीलिए मिली हुई है।

हालिया दिनों में आयोजकों में यह सोच घर कर रही है कि धार्मिक जलसों के लिए अनुमति लेने की जरूरत नहीं है। अगर आज्ञा ले भी ली, तो प्रशासन द्वारा लगाई गई शर्तों को मानने का कोई औचित्य नहीं। यह गलत प्रवृत्ति है। इसी के कारण देश भर में कई बाबा प्रकट हो गए हैं। ये अक्सर बरसात के दौरान चौमासा में सामने आते हैं। इनका इलाका भी बंटा हुआ होता है। ये स्वयंभू बाबा किसी को कुछ नहीं मानते और भीड़ का इस्तेमाल अपनी ताकत दिखाने के लिए करते हैं। ऐसे कार्यक्रमों पर पर्याप्त सख्ती आवश्यक है। मगर धार्मिक आयोजनों को लेकर जिला प्रशासन में एक तरह का खौफ भी बना रहता है। यह स्थिति तब है, जब जिले पहले की तुलना में छोटे कर दिए गए हैं। जाहिर है, उसका यह डर मुनासिब नहीं है।

ऐसी स्थिति से पार पाने के लिए जरूरी है कि नियमों का हरसंभव पालन किया जाए। हर क्षेत्र के हिसाब से एक मानक संचालन प्रक्रिया (स्टैंडर्ड ऑपरेटिंग प्रोसीजर, यानी एसओपी) बनी हुई है, जिसमें बताया गया है कि जब भीड़ इकट्ठी हो जाए, तो उसका प्रबंधन कैसे किया जाना चाहिए? किस तरह के कार्यक्रमों को अनुमति देनी है और किस कदर शर्तें मनवानी है। इस प्रक्रिया पर सख्ती से अमल आवश्यक है।

भगदड़ की ज्यादातर घटनाएं आयोजन के समापन के वक्त होती हैं। फरवरी, 2013 में प्रयाग में कुंभ से लौटती भीड़ के कारण रेलवे स्टेशन पर मची भगदड़ हो या हाथरस की ताजा घटना, समस्या आखिरी लम्हों में ही पैदा हुई। इसकी दो वजहें मानी जाती हैं। पहली, आखिरी वक्त में पुलिसकर्मी सुस्त पड़ जाते हैं और कहीं-कहीं तो वापस भी लौट जाते हैं। इसके कारण शरारती तत्वों को बखेड़ा करने का मौका मिल जाता है। और दूसरी, आयोजनों में शामिल होने के लिए श्रद्धालु बेशक टुकड़े-टुकड़े में आते हैं, पर आयोजन स्थल से निकलते समय एक झुंड में बाहर आते हैं। यह एक चुनौतीपूर्ण परिस्थिति होती है। इसे संभालने का दायित्व वरिष्ठ पुलिस अधिकारियों पर होता है। कुंभ के दौरान तो प्रयागराज के जोनल आईजी को आसपास के 10-12 जिलों के यातायात और भीड़ प्रबंधन का प्रमुख बनाया जाता है, ताकि श्रद्धालुओं के आने-जाने का उचित प्रबंधन हो सके।

यहां एक और मसला है, जो मैंने अपनी पुलिस सेवा के दौरान वर्ष 2001 के कुंभ में देखा था। यह है लोगों की मानसिकता। मैं और तत्कालीन एसएसपी लोगों से यह कहते-कहते थक गए कि वे स्नान कर लें, ताकि भीड़ कुछ कम हो, लेकिन 'अमृत-बूंद के गिरने' के नजदीक ही नहाने पर लोग अड़े रहते थे। कोई इससे पहले नहाने को तैयार नहीं होता था, जिसके कारण भीड़ का दबाव बढ़ जाता था। चूंकि अगले वर्ष प्रयागराज में फिर से कुंभ का आयोजन हो रहा है, इसलिए स्थानीय प्रशासन के लिए यह सबक जैसा है कि भीड़ प्रबंधन के लिए उसे दो बड़ी चुनौतियों से पार पाना होगा। एक, लोगों की मुहुर्त देख नहाने की जिद और दूसरा, संगम स्थल के पास ही स्नान की लालसा। हर आदमी एक खास समय में यह काम करना चाहेगा, जिस कारण अराजकता हो सकती है। इसको संभालना आसान काम नहीं होगा।

जाहिर है, कुछ बातों का यदि ख्याल रखा जाए, तो ऐसे आयोजनों में होने वाले दुखद हादसों पर हम काफी हद तक लगाम लगा सकते हैं। सबसे पहले तो पुख्ता बंदोबस्त आवश्यक है, फिर एसओपी का पालन सुनिश्चित करना होगा। इसके बाद नियमों व शर्तों के पालन में सख्ती दिखानी होगी और फिर, बिना डरे हुए भीड़ का उचित प्रबंधन करना होगा। चूंकि लोग ऐसे आयोजनों से भावनात्मक रूप से भी जुड़े होते हैं, इसलिए उनकी मानसिकता को समझते हुए स्थानीय प्रशासन को उचित कदम उठाने होंगे। विशेषकर आखिरी लम्हों में खास सावधानी बरतनी होगी, क्योंकि अप्रत्याशित हालात बनने की आशंका अंत में ही सबसे अधिक होती है।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

भारतीय अदालतों पर मुकदमों का बोझ बढ़ाती लंबी जिरह

यहां स्कैन करें
राहुल मथान | साइबर विशेषज्ञ

अपनी किताब द कोर्ट ऑन ट्रायल में अपर्णा चंद्रा, सीतल कलंत्री और विलियम हबर्ड ने भारतीय सुप्रीम कोर्ट के प्रदर्शन का आकलन करने के लिए डेटा-संचालित दृष्टिकोण अपनाया है। शीर्ष अदालत के दस लाख से भी अधिक मामलों के डेटा-सेट का उपयोग करते हुए इन तीनों ने कई सवालों का उत्तर खोजने का प्रयास किया है। मसलन, क्या हमारी शीर्ष अदालत वास्तव में 'जनता का न्यायालय' है; क्या कुछ व्यक्तियों (बड़े नामचीन वकीलों) का इसके फैसलों पर ज्यादा असर है; क्या रोस्टर-मास्टर के तौर पर प्रधान न्यायाधीश मनपसंद पीठ को अहम मुकदमों को सौंपने की शक्ति के जरिये अपना प्रभाव बढ़ाते हैं; और क्या सेवानिवृत्ति के बाद नियुक्ति का वादा किसी न्यायाधीश के कार्यकाल के अंतिम दिनों के न्यायिक निर्णयों को प्रभावित कर सकता है?

इस किताब की कुछ बातों से मैं सहमत नहीं हूं। जैसे, सुप्रीम कोर्ट जनता की अदालत है या नहीं, इसके आकलन के लिए अपनाई गई इनकी पद्धति। लेखक त्रयी ने इस आकलन के लिए मुकदमों को स्वीकृत किए जाने के आंकड़ों को देखा और तर्क दिया कि यह सचमुच लोगों की अदालत है, क्योंकि सुबूत बताते हैं कि न्यायालय ऐसे अधिक मामलों को स्वीकार करता है, जिनमें जीतने की संभावना नहीं होती। मेरी नजर में इस निष्कर्ष पर पहुंचने का यह पेचीदा तरीका है। सरल रास्ता यह होता कि विशेषाधिकार से रहित लोगों द्वारा दायर मुकदमों की संख्या गिनी जाती, और फिर उनमें से किस अनुपात में मुकदमे स्वीकार किए गए, इसका आकलन किया जाता।

भारत में एक गहरी धारणा है कि जब तक वकील लंबी मौखिक जिरह नहीं करेंगे, तब तक न्याय ही नहीं हो सकेगा।

हालांकि, इसमें कई जानकारियां ऐसी हैं, जो काफी उपयोगी हैं। उदाहरण के लिए, सुप्रीम कोर्ट में लंबित मामलों के आंकड़े तो आंखें खोलने वाले हैं। शीर्ष अदालत में दर्ज सभी मामलों में से लगभग 40 प्रतिशत मुकदमे पांच साल से अधिक समय से लंबित हैं, तो वहीं 7.7 फीसदी मामले 10 से भी अधिक वर्षों से लंबित पड़े हैं। हम सब भारतीय कानून प्रणाली की लेट-लतीफी से बखूबी वाकिफ हैं, पर यह कई लोगों के लिए एक झटका हो सकता है कि देश की सबसे ऊंची अदालत भी कुछ मामलों में उच्च न्यायालय जितना लंबा समय लेती है!

ये तीनों लेखक बैकलॉग समस्या का समाधान भी सुझाते हैं। उनके मुताबिक, मुकदमों में जिरह पर अनुचित जोर देरी का बड़ा कारण है। जाहिर है, हम मौखिक जिरह से बचते हुए लिखित प्रस्तुतियों से भी फैसले तक पहुंच सकते हैं, खासकर वाणिज्यिक विवाद के मामलों में, जहां निर्णय अक्सर तथ्य की खोज मात्र होता है। ये कुछ ऐसी कमियां हैं, जिनके हम सब इतने अभ्यस्त हो गए हैं कि हम मानते हैं, यह न्यायिक प्रणाली की अपरिहार्य विशेषता है। यह एक गहरी धारणा है कि जब तक वकील मौखिक जिरह नहीं करेंगे, तब तक न्याय ही नहीं मिलेगा।

पिछले महीने, अमेरिका में एक अपीलीय न्यायाधीश के साथ मुझे सप्ताहांत बिताने का मौका मिला। उस दौरान हमने भारतीय न्यायिक प्रणाली के विभिन्न पहलुओं पर चर्चा की और यह जानने की भी कोशिश की कि अमेरिका में काम करने के तरीके से यह कैसे भिन्न है? मुझे यह जानकर आश्चर्य हुआ कि कई मामलों में अमेरिकी न्यायाधीश केवल लिखित दलीलों की बिना पर ही मुकदमों का फैसला करते हैं। मौखिक जिरह के लिए भी वहां एक सख्त समय-सीमा की व्यवस्था है। आम तौर पर छोटे मामलों में हर पक्ष के लिए 10 मिनट से अधिक नहीं, बल्कि सबसे महत्वपूर्ण (मृत्युदंड) मामलों में हरेक पक्ष को 30 मिनट तक मौखिक जिरह की अनुमति होती है।

जब मैंने उनसे पूछा कि सिर्फ 20 मिनट की मौखिक जिरह के बाद किसी मुकदमे का फैसला करते हुए उन्हें कैसा लगता है, तो उनका जवाब था, लगभग हरेक मामले में उनका निर्णय काफी हद तक लिखित दलीलों पर आधारित होता है। जब वकील मौखिक जिरह करते हैं, तब वह उस समय का उपयोग उन मुद्दों पर स्पष्टीकरण पाने के लिए करती हैं, जो लिखित प्रस्तुतियों में तफसील से शामिल नहीं किए गए होते।

अपने देश में 30 मिनट निराशाजनक रूप से कम लग सकते हैं। लेकिन यदि यह अमेरिका में काम कर सकता है, तो कोई वजह नहीं कि यहां यह काम न करे। न्यायिक दक्षता बढ़ाने के लिए भारतीय अदालतों में मौखिक जिरह पर एक समय-सीमा लगाने की कोशिश होनी चाहिए।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

मनसा वाचा कर्मणा

सत्य को बेलाग कहें

राष्ट्र के विकास में जो भी रोड़े अटकाता है, उस पर आघात करने में हमें मुरव्वत नहीं करनी चाहिए और जो जैसा है, उसे वैसा जवाब देने में न कोई लाग-लपेट करना चाहिए। गंभीर राजनीति में अत्यधिक सीधे स्वभाव, चक्षु-लज्जा (सदैव हंसमुख और मृदुल रहने की चाह) से कभी काम नहीं चलने का।... यह मांग कि अपने विरोधियों की अवस्था और पिछली सेवाओं का ख्याल करके हमें चुप रहना चाहिए, राजनीति की दृष्टि से अनैतिक है। खुला आक्रमण, बेमुरव्वत आलोचना, तीखा से तीखा व्यंग्य, अधिक से अधिक चोट पहुंचाने वाली विडंबना, ये सारे तरीके राजनीति में वाजिब हैं।

हमारे पास कठोर बातें कहने को हैं; तो उन्हें कठोरता के साथ ही कह डालें; हमारे पास कड़े काम करने को हैं; तो चलो, उन्हें कड़ाई के साथ कर डालें। मगर शक्ति के पतित होकर हिंसा में परिणत होने और कठोरता के क्रूरता में परिवर्तित होने का खतरा सदैव बना रहता है। जहां तक मनुष्य के लिए संभव हो, इससे बचाना चाहिए।

विश्व के इतिहास में ऐसे युग आते हैं, जब उसकी नियति का नियंत्रण करने वाली अलक्ष्य सत्ता परिवर्तन के विनाशकारी आवेग और पुरातन के प्रति उत्कट अधीरता से भरी प्रतीत होती है। महामाता, आद्या शक्ति ने राष्ट्रों को अपने हाथ में लेकर उन्हें नया रूप देने का संकल्प किया है। तोपों की आवाज और फौजों के कदमों के धमाके, बड़े-बड़े अधःपतनों के चकनाचूर होने और तेज व हिंसात्मक क्रांतियों के शोरगुल से भरे ये युग तीव्र विनाश और सशक्त सृजन के युग हैं। दुनिया को गलाने वाली कढ़ाई में डाल दिया जाता है और वह नया रूप, नए आकार लेकर निकल आती है।

बंकिम चंद्र चटर्जी की अपने राष्ट्र की परम सेवा यह थी कि उन्होंने हमें अपनी माता की झांकी दिखलाई।... जब तक मातृभूमि मन की आंख को पृथ्वी के एक विस्तार अथवा व्यक्तियों के एक समूह से और कुछ अधिक के रूप में अपने को प्रकट नहीं करती; जब तक वह एक महान देवी और मातृक शक्ति के रूप में, सुंदरता की ऐसी आकृति में अपने को नहीं ढालती, जो मन पर प्रभुत्व जमा सके और हृदय को ग्रहण कर सके,

शक्ति के पतित होकर हिंसा में परिणत होने और कठोरता के क्रूरता में परिवर्तित होने का खतरा सदैव बना रहता है। जहां तक मनुष्य के लिए संभव हो, इससे बचाना चाहिए।

तब तक... ऐसी देशभक्ति, जो चमत्कारिक कार्य संपन्न कर सकती है और एक विनाशोन्मुख राष्ट्र को बचा सकती है, पैदा नहीं होती।

वर्षों पहले बंकिम ने अपना महान गीत लिखा था और बहुत कम ने सुना, पर लंबी भ्रांतियों से एकाएक जागने के क्षण में बंगाल के लोग सत्य की चारों ओर तलाश करने लगे और एक होनहार घड़ी में कोई *बंदे मातरम्* गा उठा। मंत्र फूंक दिया गया और केवल एक दिन में ही समूचे लोग देशभक्ति के धर्म में परिवर्तित हो गए। माता ने अपने को प्रकट कर दिया था।

श्री अरविंद

अमित शाह | केंद्रीय गृह मंत्री

नए कानूनों में सबसे पहली प्राथमिकता महिलाओं और बच्चों के खिलाफ होने वाले अपराधों को दी गई है। उनके प्रति अपराध पर नया अध्याय जोड़कर इसे और भी संवेदनशील बनाया गया है।

अनुलोम-विलोम

हाथरस भगदड़

आयोजकों की लापरवाही ही मुख्य वजह

उत्तर प्रदेश के हाथरस में सत्संग के बाद मची भगदड़ बहुत ही पीड़ादायक घटना है। इस हादसे के फिलहाल अलग-अलग कारण बताए जा रहे हैं। जैसे, भोले बाबा की चरण-धूलि लेने के चक्कर में हुई धक्का-मुक्की से भगदड़ मच गई। दूसरा, जिस जगह पर प्रवचन का आयोजन किया गया था, वह संकरा था और वहां से बाहर निकलने के रास्ते काफी तंग थे। बहरहाल, भगदड़ जिस भी कारण से मची हो, लेकिन यह होना नहीं चाहिए था। प्रवचन देने वाले गुरुओं-महात्माओं के प्रति श्रद्धालुओं में बहुत ही आस्था होती है। इसी कारण प्रवचन या धार्मिक आयोजनों में भारी भीड़ का होना स्वाभाविक माना जाता है। इसलिए यह आयोजकों का कर्तव्य होता है कि वे भीड़ को नियंत्रित करने के तमाम उपाय अपनाएं। दुर्भाग्य से हाथरस में इसका अभाव था। यह जानलेवा हादसा वास्तव में भारी लापरवाही व जिम्मेदारी का अभाव प्रदर्शित करता है। दुखद यह भी है कि हर हादसे के बाद बार-बार यही सवाल पूछा जाता है कि पिछली घटनाओं से क्या सबक लिया गया या हादसे की पुनरावृत्ति क्यों हुई? फिर भी, आयोजक अपनी जिम्मेदारियों का निर्वहन नहीं करते। अब तो लगता है कि श्रद्धालुओं को ही भीड़ का हिस्सा बनने से बचना चाहिए, ताकि उनकी जान पर न बन आए।

हेमा हरि उपाध्याय, टिप्पणीकार

जिम्मेदारी तय हो

उत्तर प्रदेश के हाथरस में दूरदराज के इलाकों से लोग आए थे हरि भजन के लिए, लेकिन ओटन लगे कपास। भगदड़-स्थल का मंजर हृदयाघात करने वाला है, तो शासन-प्रशासन की दलीलें भी कम मारक नहीं हैं। मृतकों अथवा घायलों के लिए मुआवजे की घोषणा जरूर कर दी गई है, लेकिन क्या चंद रुपयों से अपनों को खोने का गम कम हो सकता है? कतई नहीं। फिर क्यों इन स्वयंभू बाबाओं को सत्संग की अनुमति दी जाती है? सवाल यह भी है कि जब आयोजकों को सत्संग का स्वीकृति-पत्र दिया गया, तब क्या उनसे यह पूछना नहीं चाहिए था कि उनके पास भीड़ को नियंत्रित करने के क्या तंत्र हैं? कहा जा रहा है कि घटनास्थल पर एंबुलेंस और अग्निशमन यंत्रों का भी प्रबंध नहीं किया गया था? अगर यह सच है, तो क्या उचित व्यवस्था न करने के लिए आयोजकों को कानूनी कठघरे में खड़ा नहीं किया जाना चाहिए? हालांकि, उनके खिलाफ मामले जरूर दर्ज कर लिए गए हैं, लेकिन जब तक उनको उचित सजा नहीं सुनाई जाएगी, हाथरस पीड़ितों को इंसाफ नहीं मिल सकेगा। सरकार और विपक्ष को एकजुट होकर इस मसले को देखना चाहिए, न कि राजनीतिक रोटी सेंकनी चाहिए।

हर्षवर्द्धन, टिप्पणीकार

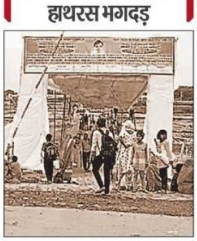

भक्ति और अंधभक्ति का फर्क समझें

धार्मिक आयोजन में भगदड़ कोई पहली बार नहीं मची है। पहले भी ऐसी कई घटनाएं हो चुकी हैं, जिनमें न जाने कितने लोगों की जान जा चुकी है। दुर्भाग्यपूर्ण है कि इन हादसों को अब तक रोका नहीं जा सका है। हालांकि, मेरा मानना है कि जब तक श्रद्धालुओं पर 'अंधभक्ति' हावी रहेगी, तब तक इसे शायद ही रोका जा सकता है। दरअसल, हर धर्म में ऐसे-ऐसे गुरु हैं, जिनके नाम पर भक्त कुछ भी कर गुजरने से नहीं हिचकते। फिर चाहे उनकी जान पर ही क्यों न बन आए? पुण्य का भागीदार बनने के लिए वे हर समय लालायित रहते हैं।

अभी ज्यादा दिन नहीं बीते हैं, जब हज के दौरान मौसम की मार के कारण दुनिया भर के सैकड़ों लोग मारे गए। बेशक उनकी जान किसी भगदड़ में नहीं गई, लेकिन जब यह मालूम था कि इस साल सऊदी अरब का तापमान 50 डिग्री सेल्सियस से ऊपर रहेगा, तो फिर जरूरी सावधानियां क्यों नहीं बरती गईं? इसकी एक बड़ी वजह यह भी है कि धर्मस्थलों पर मौत को सौभाग्य की बात माना जाता है। जाहिर है, जब तक इस तरह के विचारों से हम बंधे रहेंगे, तब तक धार्मिक जलसों का सुरक्षित आयोजन मुमकिन नहीं हो सकेगा। हाथरस की घटना इसलिए भी नहीं चौंकाती, क्योंकि देश के मध्यम व निम्न वर्ग में धर्म-अध्यात्म का प्रभाव काफी ज्यादा बढ़ गया है। वे अपनी हर मुश्किलों का समाधान ईश्वर की भक्ति में खोज रहे हैं, जबकि इंसान की कई समस्याओं का निराकरण सरकार और प्रशासन में बैठे लोगों के पास होता है।

वास्तव में, लोगों की मानसिकता में सुधार की सख्त जरूरत है। उनको यह समझाना होगा कि मन चंगा, तो कठौती में गंगा। यह सही है कि हर धर्म में गुरुओं का मुकाम बहुत ऊंचा होता है और सच्चे धर्मगुरु जीवन की दशा-दिशा बदल देते हैं, लेकिन आज जिस तरह के छद्म गुरुओं की संख्या बढ़ती जा रही है, उसमें भक्तों को ही संभलकर रहना होगा। उन्हें ईश्वर का सान्निध्य पाने के लिए ऐसे किसी गुरु की जरूरत नहीं होनी चाहिए। अगर लोग यह बात समझ गए, तो यकीनन इस तरह के आयोजनों में भीड़ भी काफी कम हो जाएगी और लोग छद्म गुरुओं को आईना भी दिखाने लगेंगे।

बीते कुछ वर्षों में जिस तरह से धार्मिक आयोजनों में हादसे बढ़ने लगे हैं, यह जरूरी है कि लोगों को भक्ति और अंधभक्ति के बीच का फर्क समझाया जाए। यह काम या तो प्रशासनिक अधिकारी कर सकेंगे या फिर निर्वाचित जन-प्रतिनिधि। उनको तत्परता दिखानी चाहिए, तभी इस तरह की घटनाओं पर रोक लग सकेगी।

जंग बहादुर सिंह, टिप्पणीकार

कल्पमेधा

जब आप सहर्ष वही बने रहने पर राजी होते हैं, जो आप हैं और तुलना, प्रतिस्पर्धा में नहीं पड़ते हैं, तो सभी आपका सम्मान करते हैं और आपको इज्जत देते हैं।

– लाओत्से

भरोसे का सवाल

प्रतियोगी और प्रवेश परीक्षाओं में पर्चाफोड़ की बढ़ती घटनाओं से राष्ट्रीय परीक्षा एजंसी यानी एनटीए की विश्वसनीयता गंभीर रूप से प्रश्नांकित हुई है। मगर चिकित्सा पाठ्यक्रमों के लिए आयोजित राष्ट्रीय पात्रता सह प्रवेश परीक्षा यानी नीट में हुई धांधली से पूरी व्यवस्था पर अंगुलियां उठनी शुरू हो गई हैं। अच्छी बात है कि इस मामले में प्रधानमंत्री ने संसद को आश्वस्त किया कि युवाओं के भविष्य के साथ खिलवाड़ करने वालों के खिलाफ सख्त कदम उठाए जाएंगे। परीक्षा प्रणाली को पुख्ता और भरोसेमंद बनाने के उपाय किए जा रहे हैं। इस मुद्दे पर विपक्ष लगातार सरकार को घेरने का प्रयास कर रहा था। एक पूरे दिन लोकसभा में बहस कराने की मांग कर रहा था। प्रधानमंत्री के बयान के बाद अब इस पर कुछ विराम लगा है। मगर यह केवल आश्वासन तक सीमित नहीं रहना चाहिए, इसे व्यावहारिक स्तर पर दिखना भी चाहिए। शुरू से ही इस मामले को एक तरह से दबाने का प्रयास किया जाता रहा। एनटीए लगातार कहता रहा कि इस परीक्षा में कोई धांधली नहीं हुई है। जिन केंद्रों पर परीक्षार्थियों को पर्चे मिलने में बाधा पैदा हुई, उन्हें कृपांक दिए गए। इसकी वजह से अनेक छात्रों को पूरे के पूरे अंक मिल गए। इसकी जांच के लिए समिति गठित कर दी गई है।

मगर उत्तर पुस्तिकाओं की जांच में अपारदर्शिता और कुछ ही केंद्रों से सर्वाधिक और पूरे के पूरे अंक पाने वाले छात्रों के तथ्य उजागर हुए, तो संदेह और गहरा होता गया। बिहार और गुजरात में कुछ पर्चाफोड़ गिरोहों पर शिकंजा कसा, तो हैरान करने वाले तथ्य उजागर होने शुरू हो गए। हालांकि मामला सर्वोच्च न्यायालय में सुनवाई के लिए रखा गया है, इसमें जांच हो रही है, कई आरोपी पकड़े भी गए हैं। मगर यह सवाल अपनी जगह बना हुआ है कि सरकार ने शुरू में ही हस्तक्षेप क्यों नहीं किया। जो काम सरकार को करना चाहिए था, उसके लिए अदालत का दरवाजा क्यों खटखटाना पड़ा। परीक्षा रद्द करने को लेकर सरकार क्यों हिचकती रही, जबकि उसी दौरान दूसरी कई परीक्षाएं रद्द कर दी गईं। पर्चाफोड़ गिरोहों के कुछ लोगों के पकड़े जाने और उनके कबूलनामे से जाहिर हो चुका है कि नीट की परीक्षा में पारदर्शिता नहीं बरती गई। आरोप है कि नकल कराने वालों ने कुछ छात्रों से भारी रकम वसूली और उनकी उत्तर पुस्तिकाओं पर जवाब अपनी तरफ से भरवाए। अभी तक यही आरोप लगते रहे हैं कि नकल कराने वाले परीक्षा से पहले ही पर्चा बाहर कर लेते और विद्यार्थियों को उनके उत्तर रटा देते रहे हैं। मगर यह मामला उससे कहीं आगे निकल गया लगता है।

बताया जा रहा है कि नकल माफिया ने जिन विद्यार्थियों से पैसे लिए थे, उन्हें कुछ तय परीक्षा केंद्रों पर बिठाया और उनकी उत्तर पुस्तिकाओं में सही उत्तर भरवाए। इससे न केवल एनटीए की प्रश्नपत्रों की सुरक्षा में लापरवाही, बल्कि सीधे-सीधे इस धोखाधड़ी में उसकी संलिप्तता जाहिर होती है। जिस संस्था को इस मकसद से गठित किया गया था कि वह प्रतियोगी और प्रवेश परीक्षाओं में धांधली पर नकेल कसेगी, उसी पर अगर इस स्तर की धांधली में सहयोग का आरोप लग रहा है, तो भला कहां तक उस पर भरोसा कायम रह सकता है। प्रधानमंत्री ने परीक्षा प्रणाली को पारदर्शी बनाने का आश्वासन तो दिया है, मगर जब तक एनटीए की कार्यप्रणाली को भरोसेमंद नहीं बनाया जाता, उसके द्वारा आयोजित परीक्षाओं को लेकर भरोसा पैदा होना मुश्किल रहेगा।

नेपाल का हाल

एक बार फिर नेपाल में राजनीतिक अस्थिरता पैदा हो गई है। प्रधानमंत्री पुष्पकमल दहल 'प्रचंड' के खिलाफ एक नया गठबंधन बन गया है, जिसमें नेपाली कांग्रेस और सीपीएन-यूएमएल ने मिल कर सरकार बनाने की घोषणा कर दी है। ये दोनों दल अभी तक प्रचंड सरकार को समर्थन देते आ रहे थे, मगर अब उनमें मतभेद उभर गया है। हालांकि प्रचंड ने अपने पद से इस्तीफा देने से इनकार कर दिया है। उनका कहना है कि वे सदन में विश्वास मत का सामना करेंगे। पिछले वर्ष भी इसी तरह मतभेद उभरे थे और लगा था कि प्रचंड सरकार गिर जाएगी। मगर इस बार लगता है कि सत्ता की कमान प्रचंड के हाथ से फिसल जाएगी। दरअसल, नेपाल का राजनीतिक समीकरण कुछ ऐसा बन गया है कि पिछले करीब साढ़े तीन दशक से वहां गठबंधन सरकारें ही बनती आ रही हैं। थोड़े-थोड़े समय पर उनमें मतभेद उभरता है और सरकार बदल जाती है। वहां की राजनीति में प्रचंड, शेर बहादुर देउबा और खड्ग प्रसाद शर्मा 'ओली' की तिकड़ी ही हावी रही है। वही फेर-बदल कर सरकारें गिराते और बनाते देखे जाते हैं।

दरअसल, नेपाल में आनुपातिक प्रतिनिधित्व प्रणाली है। इस तरह संघीय सरकार पर प्रांतीय दलों और सरकारों का दबदबा लगातार बना रहता है। जबसे वहां नेपाली पंचायत की जगह बहुदलीय व्यवस्था लागू हुई है, तबसे गठबंधन सरकारों का दौर शुरू हुआ है और अब कहा जाता है कि राजनीतिक अस्थिरता वहां का स्थायी भाव बन चुका है। क्षेत्रीय दल बेशक संघीय स्तर पर छोटे नजर आते हैं, मगर प्रांतीय स्तर पर उनकी स्थिति मजबूत होने की वजह से वे आनुपातिक प्रतिनिधित्व प्रणाली में दबदबा बनाने में कामयाब रहते हैं। उनका मकसद ज्यादातर संघीय सरकार में पद और राजनीतिक लाभ उठाने का अधिक रहता है। इसीलिए वहां अतिराष्ट्रवाद जैसी विचारधारा भी विकसित हुई है। इस राजनीतिक जोड़-तोड़ के चलते नेपाल में भ्रष्टाचार बढ़ा है, वह दुनिया के सबसे कम विकसित देशों की श्रेणी में आ गया है। लोग इस राजनीतिक अस्थिरता से परेशान हैं। अगर वहां की संविधान सभा में जल्दी इस समस्या का कोई स्थायी समाधान नहीं तलाशा गया, तो नेपाल का हाल दिन पर दिन खराब ही होता जाएगा।

पांव पसारता नशे का जहरीला धंधा

जहरीली शराब पीने से हर वर्ष बड़ी संख्या में लोगों की मौतें होती हैं और सैकड़ों परिवार उजड़ जाते हैं, इसलिए राज्य सरकारें इस अवैध कारोबार को लेकर अपने दायित्वों से मुंह नहीं मोड़ सकतीं।

योगेश कुमार गोयल

पिछले दिनों तमिलनाडु के कल्लाकुरिची जिले में जहरीली शराब पीने से 63 से ज्यादा लोगों की मौत हो गई, 135 से ज्यादा लोगों को अस्पताल में भर्ती कराना पड़ा। सरकार ने मामले की जांच सीबीसीआइडी को सौंप दी और अवैध शराब विक्रेता सहित चार लोगों को गिरफ्तार कर लिया गया। उनके पास से जब्त की गई करीब 200 लीटर अवैध शराब की जांच में सामने आया कि उसमें घातक 'मेथनाल' मौजूद था। उत्तरी तमिलनाडु के ही मरक्कनम और मधुरांतकम में 2023 में भी जहरीली शराब ने कई जिंदगियों को लील लिया था। तब भी जांच से पता चला था कि औद्योगिक मेथनाल को अवैध चुलाई कुटीर उद्योग में भेजा जा रहा था।

जहरीली शराब का अवैध कारोबार देशभर में फल-फूल रहा है, जिसमें पुलिस की भूमिका सदा संदिग्ध रही है। हालांकि कभी-कभार छापेमारी कर जिस प्रकार शराब तस्करों से बड़ी मात्रा में अवैध शराब बरामद होती है, उससे स्पष्ट होता रहा है कि जहरीली शराब का अवैध धंधा ताकतवर लोगों के संरक्षण में ही तेजी से फल-फूल रहा है। इसी वर्ष 22 मार्च को पंजाब के संगरूर में भी जहरीली शराब पीने से 22 लोगों की मौत हो गई थी। पंजाब तो वैसे भी नशाखोरी के लिए बदनाम रहा है। वहां 31 जुलाई, 2020 को तरनतारन में अवैध शराब पीने से 102 लोगों की मौत हो गई थी, जबकि खडूर साहिब के पंडोरी गोला गांव में 48 लोगों की आंखों की रोशनी चली गई थी। देश के विभिन्न राज्यों में लोग अक्सर अवैध रूप से बनाई जाने वाली नकली शराब पीकर मौत के मुंह में समा जाते रहे हैं, लेकिन प्रशासन की भूमिका प्रायः ऐसे अवैध धंधों में लिप्त लोगों पर शिकंजा कसने के बजाय दिखावे के तौर पर कार्रवाई करने तक ही सीमित रहती है।

चिंता का विषय है कि देश की सरकारों के लिए यह कभी कोई बड़ा मुद्दा नहीं बनता, न ही कभी यह चुनावी मुद्दा बनता है। जहरीली शराब पीने के कारण अक्सर लोगों के मौत के मुंह में समाने की खबरें सुर्खियां बनती हैं, लेकिन कुछ दिन हो-हल्ला मचने के बाद सब शांत हो जाता है और इस अवैध गोरखधंधे पर लगाम कसने के कोई गंभीर प्रयास प्रशासन द्वारा नहीं किए जाते। जहरीली शराब पीने से हर वर्ष बड़ी संख्या में लोगों की मौतें होती हैं और सैकड़ों परिवार उजड़ जाते हैं, इसलिए राज्य सरकारें इस अवैध कारोबार को लेकर अपने दायित्वों से मुंह नहीं मोड़ सकतीं।

लोकसभा में एक प्रश्न के उत्तर में कुछ समय पूर्व तत्कालीन केंद्रीय गृह राज्यमंत्री ने बताया था कि भारत में 2016 से 2020 के बीच अवैध और नकली शराब पीने से 6172 लोगों की मौत हुई थी। आंकड़ों के मुताबिक 2016 में 1054, 2017 में 1510, 2018 में 1365, 2019 में 1296 और 2020 में 947 लोगों की मौत अवैध और नकली शराब पीने से हुई थी। अवैध और नकली शराब से मध्यप्रदेश में सबसे ज्यादा 1214 मौतें हुईं, उसके बाद कर्नाटक में 909 तथा तीसरे नंबर पर पंजाब में 725 लोगों की मौत हुई। हरियाणा में 476

लोगों और उत्तर प्रदेश में इस दौरान 291 लोगों की मौत हुई थी। उन पांच वर्षों में देश की राजधानी दिल्ली में 94 लोगों की मौत हुई थी, जबकि शराबबंदी वाले राज्य गुजरात और बिहार में भी उस दौरान क्रमशः 50 और 21 लोग मारे गए थे।

> **जहरीली शराब से लोगों की मौत होने पर उनके परिवार के सामने रोजी-रोटी का संकट खड़ा हो जाता है। यही कारण है कि नकली शराब बनाने वालों के खिलाफ ऐसे कठोर कदम उठाने की मांग होती रही है, जो दूसरों के लिए भी नजीर बने। अवैध शराब का कारोबार कमोबेश हर राज्य की समस्या है और चोरी-छिपे नकली शराब बनाने और बेचने वाले हर कहीं मौजूद हैं, इसलिए जब तक इस अवैध धंधे की बड़ी मछलियों पर हाथ नहीं डाला जाएगा, तब तक जहरीली शराब इसी प्रकार लोगों को बेमौत मारती रहेगी।**

वर्षवार आंकड़े देखें तो राष्ट्रीय अपराध रिकार्ड ब्यूरो की रपट के अनुसार 2021 में जहरीली शराब के कारण देशभर में 782 लोगों की मौत हुई थी, सबसे ज्यादा उत्तर प्रदेश में 137, पंजाब में 127, मध्यप्रदेश में 108, कर्नाटक में 104, झारखंड में 60 और राजस्थान में 51 मौतें हुईं। कोरोनाकाल के दौरान 2020 में देशभर में जहरीली शराब से 947 लोगों की जान गई, जिनमें मध्यप्रदेश में सर्वाधिक 214, झारखंड में 139, पंजाब में 133, कर्नाटक में 99 और छत्तीसगढ़ में 67 लोगों ने जान गंवाई। 2019 में 1296 लोगों की मौत हुई और सबसे ज्यादा 268 लोगों की मौत कर्नाटक में, पंजाब में 191, मध्यप्रदेश में 190, छत्तीसगढ़ और झारखंड में 115-115, असम में 98 और राजस्थान में 88 लोगों ने दम तोड़ा। 2018 में 1365 मौतों में मध्यप्रदेश में सबसे ज्यादा 410, कर्नाटक में 218, हरियाणा में 162, पंजाब में 159, उत्तर प्रदेश में 78, छत्तीसगढ़ में 77 और राजस्थान में 64 लोगों की मौत जहरीली शराब से हुई।

कच्ची शराब आमतौर पर गुड़, पानी, यूरिया आदि से बनाई जाती है, जिसमें कई ऐसे रसायन भी इस्तेमाल किए जाते हैं, जो स्वास्थ्य के लिए बेहद खतरनाक होते हैं। इसे लंबे समय तक रखने से कई बार इसमें कीड़े पैदा हो जाते हैं, जो शराब को जहरीली बना देते हैं। देसी शराब बनाने के लिए सामान्यतया गन्ने या खजूर का रस, शक्कर, शोरा, महुआ के फूल, जौ, मकई, सड़े हुए अंगूर, आलू, चावल, खराब संतरे आदि का इस्तेमाल होता है। स्टार्च वाली इन चीजों में यीस्ट मिलाकर फर्मेंटेशन कराया जाता है और इन्हें सड़ाने के लिए आक्सीटाक्सिन का इस्तेमाल किया जाता है, जिसमें नौसादर, बेशरमबेल की पत्ती और यूरिया भी मिलाया जाता है। ये चीजें नपुंसकता बढ़ाती और तंत्रिका तंत्र पर दुष्प्रभाव डालती हैं। इन्हें मिट्टी में गाड़ने के बाद भट्ठी पर चढ़ाया जाता है और इससे निकलने वाली भाप से देशी शराब तैयार होती है, जिसे और नशीला बनाने के लिए मेथनाल मिलाया जाता है।

अवैध रूप से उत्पादित शराब प्रायः खराब गुणवत्ता वाले कच्चे माल और अस्वच्छ परिस्थितियों में बनाई जाती है। कानून के रक्षकों की नाक तले देश के विभिन्न ग्रामीण अंचलों में अवैध शराब निकालने की भट्ठियां चलती रहती हैं। इन्हीं भट्ठियों में अवैध रूप से चोरी-छिपे शराब बनाई और बेची जाती है, जो काफी सस्ती, मगर उतनी ही खतरनाक भी होती है। अवैध शराब का जहरीला धंधा इसीलिए तेजी से फलता-फूलता है कि सस्ती और खुली शराब पाने के लालच में लोग खुद-ब-खुद उसकी ओर खिंचे चले जाते हैं, लेकिन सस्ती शराब के कारण कोई अपनी आंखों की रोशनी गंवा बैठता है, तो कोई अपनी जीवनलीला ही समाप्त कर बैठता है।

नकली शराब पीकर मरने वाले ज्यादातर गरीब तबके के लोग होते हैं, जो कम पैसे में नशे की पूर्ति के लिए ऐसी शराब खरीदते हैं। जहरीली शराब से लोगों की मौत होने पर उनके परिवार के सामने रोजी-रोटी का संकट खड़ा हो जाता है। यही कारण है कि नकली शराब बनाने वालों के खिलाफ ऐसे कठोर कदम उठाने की मांग होती रही है, जो दूसरों के लिए भी नजीर बने। अवैध शराब का कारोबार कमोबेश हर राज्य की समस्या है और चोरी-छिपे नकली शराब बनाने और बेचने वाले हर कहीं मौजूद हैं, इसलिए जब तक इस अवैध धंधे की बड़ी मछलियों पर हाथ नहीं डाला जाएगा, तब तक जहरीली शराब इसी प्रकार लोगों को बेमौत मारती रहेगी।

बूंद बूंद भविष्य

दुनिया मेरे आगे

मुकेश पोपली

वेदों, उपनिषदों, महाकाव्यों, लोक-कथाओं के अनुसार सृष्टि के उद्भव के समय चारों ओर जल ही जल था। इस जल का इधर-उधर बिखरना, बहना, भाप बनकर उड़ जाना और फिर भी पृथ्वी के लगभग तीन चौथाई भाग को घेरे रखना एक जादू जैसा लगता है। मगर सच यही है कि हमारे जीवन की गति पानी से ही है। हम अगर स्थिर हैं तो सीधे-सादे अर्थों मे शव हैं और शव निष्प्राण होता है, लेकिन अगर हमारे शरीर की एक नाड़ी में भी गति है तो वहां एक आशा जगती है और हम फिर से इस दुनिया में रमने की कोशिश करते हैं। दरअसल, जल हमेशा गतिमान रहता है और फिर वह चाहे नदी हो, नाला हो या बरसात हो। आकाश से टपकती बूंदें केवल हम इंसानों को ही नहीं, वन्य-जीवों को, घरेलू पशुओं को, पंख फैलाए उड़ते पक्षियों को, पेड़-पौधों को, जंगल के मजबूत वृक्षों को, कोमल टहनियों को, पत्तों को, फल-फूलों को और यहां तक कि शुष्क और पथरीले पहाड़ों को भी एक नया जीवन देती हैं।

बारिश के मौसम में जब बूंदें बादलों के घर से पृथ्वी पर आ रही होती हैं, तो हम सहज ही महसूस करते हैं कि हमारा जीवन बदल रहा है। आकाश से बरसती ये बूंदें निर्मल होती हैं, कोमल होती हैं। इनके अंदर एक संगीत छिपा होता है जो हमें आह्लादित करता है, हमारे हृदय में आनंद उत्पन्न करता है। भीगते हुए फूलों, झूमते हुए पौधों और अविरल बहती धाराओं को देखकर हमारे मन में गहरे तक छिपी कलुषित भावनाएं कहीं दूर बह जाती हैं। ये बूंदें हमें उत्साहित करती हैं और हम अपनी कल्पनाओं को शब्दों में रचना और गुनगुनाना प्रारंभ कर देते हैं। हमारे मन में अनेक कविताओं का झरना-सा फूट पड़ता है। ढोल-मंजीरा, डफली-घूंघरू सबके सब एक नए अंदाज में हमारे कदमों को थिरकाने लगते हैं। हमारे होठों पर राग मल्हार अपने आप उतर आता है और हाथों की तालियां, पैरों की थिरकन एक ऐसा माहौल बना देती हैं कि चारों तरफ बूंदों की छमछम गूंजने लगती है।

मेह की बूंदों से जमीन के भीतर भी आहट होती है और नई कोंपलें जन्म लेने लगती हैं, जिन्हें देखकर हमें जीवन की यह सच्चाई पता चलती है कि जल ही जीवन है। जल का स्वभाव चंचल होता है और इसी से हमें वह शक्ति मिलती है कि हम अपने जीवन की तमाम उदासियों को मंझधार में छोड़ दें और खुद अपना और दूसरों का जीवन संवारें। जल भरी बूंदों के आगमन से हमारे आसपास एक उत्सव-सा जन्म ले लेता है। वृक्षों की झूमती डालियां और पक्षियों का कलरव हमें इस उत्सव का आमंत्रण देता प्रतीत होता है। हमें अपनी प्राचीन संस्कृति और सभ्यता याद आने लगती है। इस बीच आकाश पर उभरते हुए इंद्रधनुष के रंगों में हम खो जाते हैं और अपने जीवन में उन अलग-अलग रंगों से भविष्य की कल्पनाओं में रंग भरने लग जाते हैं। शांत होकर टपकती बूंदें हमें आध्यात्मिकता और परोपकार के मार्ग पर आगे बढ़ने को प्रेरित करती हैं।

जिस तरह हम पानी का स्वभाव जानते हैं और बारिश के बीच कहीं आने-जाने के लिए पगडंडियों को खोजते हैं, संकरे रास्तों पर आवागमन करते हुए अपने आपको संभालते रहते हैं, क्योंकि हम जानते हैं कि जरा सी लापरवाही हमारे जीवन को कष्ट में डाल सकती है, ठीक उसी तरह हमें अपने स्वभाव पर भी विचार कर लेना चाहिए। ये बूंदें हमें सिखाती हैं कि समय हमेशा एक-सा नहीं रहता और हमेशा ही इसमें उतार-चढ़ाव आता रहता है। कभी अनुकूल, तो कभी प्रतिकूल। यह हमारे सामने के हालात के मुताबिक तय होता है। समय कभी भी हमारे वश में नहीं रहता और न ही हमें समय की उपेक्षा करनी चाहिए। कुत्सित प्रवृत्ति के चलते धन संचय से अधिक इन बूंदों का संचय करना आवश्यक है, क्योंकि यही हमारे भविष्य को सुरक्षित रखेगा।

> **बूंदें हमें सिखाती हैं कि समय हमेशा एक-सा नहीं रहता और हमेशा ही इसमें उतार-चढ़ाव आता रहता है। कभी अनुकूल तो कभी प्रतिकूल। यह हमारे सामने के हालात के मुताबिक तय होता है। समय कभी भी हमारे वश में नहीं रहता और न ही हमें समय की उपेक्षा करनी चाहिए।**

यह ध्यान रखने की जरूरत है कि आखिर ये बारिश की बूंदें हमेशा तो टपकेंगी नहीं, इसलिए इससे हमें जो जल प्राप्त होता है उसको बचाने की आदत भी हमें अपना लेनी चाहिए। वैसे भी प्रकृति का हमें हमेशा आदर करना चाहिए। विकास जरूरी है, मगर घने जंगलों को विकास के नाम पर साफ कर देने से किसी का हित नहीं हो सकता। जंगल और पेड़ों का न होना दुनिया में कैसी तबाही ला सकता है, यह एक स्वयंसिद्ध तथ्य रहा है। हमारे बुजुर्ग फरमाते हैं कि घने वृक्षों पर देवता निवास करते हैं और वही हमारा ध्यान भी रखते हैं। इसीलिए वृक्षों को पूजा जाता है। दरअसल, इनके प्रभाव से ही हमें बारिश की बूँदें मिलती हैं और फल-फूल, औषधि, हार-सिंगार, भवन-निर्माण आदि सामग्री भी प्राप्त होती है। आखिर ये बूंदें प्रकृति का ही उपहार हैं, आज मिली हैं तो इन्हें संभालना हमारा परम दायित्व है। ये बूंदें जब हमें खुशियों का भंडार सौंपती हैं, तो निश्चित ही हमें इन खुशियों को समेट लेना चाहिए, ताकि भविष्य में हम इन खुशियों को आवश्यकताओं के अनुसार बांट सकें और समाज को हमेशा प्रसन्न और आनंदित रखने के प्रयास में हम भी योगदान दे सकें।

दागी नुमाइंदे

अठारहवीं लोकसभा के नव निर्वाचित सदस्यों में कुल छियालीस फीसद सांसदों यानी 251 के विरुद्ध आपराधिक मामले देश की विभिन्न अदालतों में दर्ज हैं, जो पिछली बार से करीब तीन फीसद अधिक हैं। इनमें से 170 सांसदों के खिलाफ गंभीर किस्म के आपराधिक मामले हैं। गंभीर श्रेणी के मामलों में हत्या, बलात्कार, हत्या की कोशिश, अपहरण और महिलाओं के विरुद्ध आचरण करने के प्रारंभिक साक्ष्य हैं। बुनियादी सवाल अति गंभीर है कि नूतन भारत का निर्माण करने वाले राजनीतिक दलों ने आखिर ऐसे दागदार नेताओं को लोकसभा का टिकट क्यों दिया। ऐसे लोग समाज और अपने क्षेत्र में विकास की धारा किस प्रकार निर्धारित करेंगे? चुनाव सुधारों के कुछ प्रस्तावों पर सार्थक बहस अगर संसद में सरकार कराती है, तो उसकी नीयत को जाना जा सकता है। लेकिन कथनी और करनी में भयंकर अंतर यह स्पष्ट कर रहा है कि चुनावी सुधार की पहल करने की हिम्मत नहीं जुटाई जा रही। उच्चतम न्यायालय का कर्तव्य है कि विशेष न्यायालय में ऐसे मामलों की त्वरित सुनवाई करते हुए शीघ्र निर्णय लिया जाए।

– अशोक कुमार, पटना, बिहार

संगति कुसंगति

जब किसी के दिलोदिमाग में जाति-धर्म को लेकर नफरत भरा हो, तो उसके शिक्षित होने का कोई अर्थ नहीं, चाहे वह खुद को कितना भी काबिल या शिक्षित क्यों न समझे। अगर कोई ऊंच-नीच, छुआछूत, जाति-धर्म के नाम पर नफरत करता या फैलाता है तो वह शिक्षित होना तो दूर, मानव कहलाने का हकदार भी नहीं है। दिलोदिमाग से कोई जन्मजात नफरती नहीं होता है, बल्कि संगति का असर पड़ता है। यों कहें कि उसका व्यक्तित्व दीमक लगने की तरह जीर्णशीर्ण होने लगता है। कुछ लोग अज्ञानता का शिकार हैं तो कुछ राजनीति में वांछित फल पाने के लिए ऐसा करते हैं। ऐसे सोचने वालों के भीतर खुद की चिंतन शक्ति खत्म हो जाती है और वे दूसरों की बातों, विचारों का गुलाम हो जाते हैं। अंत में कुछ नहीं मिलता है। खुद को श्रेष्ठ समझने की भूल में दूसरों को नीचा दिखाना भले इंसान का काम नहीं है। अगर कोई यह समझता है कि उसकी करतूत कोई नहीं समझता है, तो यह भ्रम है।

– प्रसिद्ध यादव, बाबूचक, पटना

कथनी करनी

'आतंक के विरुद्ध' (संपादकीय, 27 जून) से सहमत हुआ जा सकता है। कुछ देश विश्व शांति की बात करके दुनिया को भ्रमित करते हैं, लेकिन पीठ पीछे आतंकवाद को शह देकर उसका पोषण भी करते हैं। पाकिस्तान के बाद अब कनाडा भी उसी राह पर है। हाल ही में इटली में आयोजित हुए जी-7 सम्मेलन में कनाडा के प्रधानमंत्री ने मोदी से मिलकर भारत के साथ काम करने की प्रतिबद्धता दोहराई थी जो दिखावटी साबित हुई है। कनाडा, पाकिस्तान जैसे कुछ देश सहयोग की आड़ में आतंकियों का पोषण कर वैश्विक प्रयासों को पलीता लगा रहे हैं। चूंकि आतंकवाद का उन्मूलन किसी एक देश के वश में नहीं है, ऐसे में शांतिप्रिय देशों को मिलकर आतंकवाद का पोषण करने वाले देशों का आर्थिक, व्यापारिक रूप से बहिष्कार करना चाहिए। किसी भी देश की अर्थव्यवस्था जब तक छिन्न-भिन्न नहीं होगी, तब तक वह बाज नहीं आएगा।

– अमृतलाल मारू 'रवि' इंदौर

जलजमाव से मुश्किल

एक ओर जहां पानी की समस्या गंभीर स्थिति में पहुंच गई है, पेयजल व खेती के काम के लिए जल के बिना जीव-जंतु और इंसान परेशान हैं, वहीं वर्षा जल निकासी व संचयन का अभाव है। आज दुनिया उद्योगीकरण की राह पर चल रही है तो जल संकट भी हम सबके सामने खड़ा है। जल का दुरुपयोग हो रहा है। बरसात के पानी को संरक्षित करने की कमी है। आज बारिश आते ही देश के कई शहरों में आफत आ जाती है। बर्बादी का मंजर देखने को मिलता है। जल जमाव और बाढ़ की वजह से लाखों लोग प्रभावित होते हैं। जल संरक्षण संबंधी विकास कार्यों के तहत निर्मित एनिकट, जोहड़, तालाब, नाली आदि ढांचों से भूमिगत जल स्तर में वृद्धि के बारे में शोध की जरूरत है। हमारी पेयजल आवश्यकताओं को देखते हुए जरूरी है कि जल का कुशलतम उपयोग किया जाए।

– राजेंद्र कुमावत, जयपुर

हमें लिखें, हमारा पता : edit.jansatta@expressindia.com | chaupal.jansatta@expressindia.com

www.readwhere.com

हाथरस के सबक

उत्तर प्रदेश के हाथरस में मची भगदड़ के कारण इतनी बड़ी संख्या में हुई श्रद्धालुओं की मौत तकलीफदेह तो है ही, हमारे तंत्र पर एक बड़ा सवाल भी है। ऐसे हादसे अपने देश के लिए नए नहीं हैं, समय-समय पर अलग-अलग क्षेत्रों से ऐसी खबरें आती रहती हैं। इन घटनाओं का दोहराव बताता है कि इनसे जरूरी सबक लेकर कारगर कदम उठाने का काम ठीक से नहीं हो रहा।

श्रद्धालुओं की अनियंत्रित भीड़

लापरवाही या साजिश | जहां तक हाथरस में हुई घटना की बात है तो शुरू में इसे लापरवाही का नतीजा ही माना जा रहा था। लेकिन मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ ने घटनास्थल का दौरा करने और पीड़ितों से बातचीत समेत सभी संभव स्रोतों से ब्यौरा लेने के बाद कहा है कि इसके पीछे साजिश हो सकती है। उन्होंने घटना की न्यायिक जांच के आदेश दे दिए हैं। उम्मीद की जानी चाहिए कि जांच टीम मामले की तह तक जाकर इससे जुड़े सभी पहलुओं की पड़ताल करेगी और इसके वास्तविक कारणों का पता लगाने के साथ ही बचाव के कारगर उपाय भी सुझाएगी।

सेवादारों की भूमिका | जो शुरुआती तथ्य अब तक सामने आए हैं वे भी कई अहम सवाल खड़े करते हैं। मिसाल के तौर पर बकील खुद मुख्यमंत्री, सेवादारों की भूमिका संदेह के दायरे में है। कहा जाता है कि कुछ सेवादारों ने भक्तों को धक्के दिए। इससे भगदड़ के हालात बने। कुछ हलकों में भक्तों पर पानी छोड़ने की बात कही जा रही है जिससे कीचड़ बना और कई महिलाएं उसमें गिरीं। प्रशासन के स्तर पर पर्याप्त इंतजाम न होने की शिकायतें भी हैं।

इंसान या भगवान | प्रशासनिक व्यवस्था की कमियां दूर करने, एसओपी तैयार करने और उस पर अमल सुनिश्चित करने का काम तो तत्काल प्रभाव से शुरू होना चाहिए, पर जिन वजहों से और जितनी बड़ी संख्या में लोग इस सत्संग के लिए इकट्ठा हो गए, उन्हें भी अनदेखा नहीं किया जा सकता। मसलन, सत्संग के लिए आए, कुछ लोगों ने बताया कि वे यह देखने आए थे कि ये बाबा इंसान हैं या भगवान। किन-किन तरीकों से ऐसे बाबाओं का समाज में क्रेज बनाया जाता है, उसे समझना भी समस्या को हल करने की प्रक्रिया का अभिन्न हिस्सा है।

आस्था और अंधविश्वास का फर्क | भारत जैसे देश में आस्था की बड़ी जगह है। हर व्यक्ति की आस्था का सम्मान हर हाल में होना भी चाहिए। लेकिन यह याद रखना भी जरूरी है कि आस्था और अंधविश्वास में बड़ा बारीक लेकिन महत्वपूर्ण अंतर होता है। आस्था के नाम पर समाज में अंधविश्वास फैलाने और लोगों के विश्वास का बेजा फायदा उठाने की इजाजत किसी को नहीं होनी चाहिए। यह रास्ता कठिन है और बहुत सावधानी की मांग करता है, लेकिन ऐसे हादसों को रोकना है तो यह रास्ता तय करना ही होगा।

साड्डी दिल्ली

बरामदे में अखबार

विवेक शुक्ला

बिदेश्वरी राय कनॉट प्लेस का स्थायी चेहरा हैं। गर्मी, जाड़ा, बरसात वह रीगल ब्लॉक में अखबारों, पत्रिकाओं और किताबों के साथ मौजूद रहते हैं। 45 साल पहले उन्होंने जब अपना ठिया लगाना शुरू किया था, तब कनॉट प्लेस के बरामदों में उनके जैसे करीब दर्जनभर लोग और थे। सभी अखबार, पत्रिकाएं और नॉवेल वगैरह बेचते थे। अब सिर्फ दो रह गए हैं। उनके करीब ही इलाहाबाद बैंक के आगे पांडे भी बैठते हैं। पांडे सबको अपना नाम सिर्फ पांडे ही बताते हैं। उनसे पूरा नाम पूछो तो कहते हैं- 'पांडे ही काफी है।' आप राय और पांडे से दुनिया-जहान की बातें कर सकते हैं। ब्रिटेन में आज 4 जुलाई को होने वाले आम चुनावों से लेकर टी-20 वर्ल्ड कप पर दोनों विस्तार से प्रकाश डाल सकते हैं। आपको इनके पास सुबह से शाम तक अखबार के ग्राहक मिलेंगे। मजाल है कि ग्राहक कुछ मांगे और इनके पास वह उपलब्ध ना हो। इस लिहाज से ये सेंट्रल न्यूज एजेंसी के संस्थापक आर.पी.पुरी और शंकर मार्केट की मशहूर राम गोपाल शर्मा बुक शॉप की परंपरा को आगे लेकर जा रहे हैं।

पुरी साहब और शर्मा जी कनॉट प्लेस, गोल मार्केट, राउज एवेन्यू, जनपथ वगैरह में सुबह अखबार बांटने के बाद कनॉट प्लेस के बरामदों में अपने माल के साथ बैठ जाते थे। इन दोनों ने आगे चलकर यहां अपनी दुकानें खोलीं। कनॉट प्लेस के इन दोनों पुराण पुरुषों को गुजरे कई साल हो गए हैं। पिछले साल सेंट्रल न्यूज एजेंसी भी गोल मार्केट शिफ्ट हो गई। हां, मथुरा वाले शर्मा जी की बुक शॉप अब भी आबाद है। राय और पांडे परम संतोषी हैं। इन्हें इसका कतई मलाल नहीं कि अपनी दुकान नहीं बना सके। इन्हें खुशी इस बात की है कि बिहार के समस्तीपुर से खाली हाथ दिल्ली आने के बाद भी इन्होंने यहां साख और सम्मान भरपूर पाया। दिल्ली में अपनी छत भी बनवा ली और बच्चों को पढ़ा-लिखाकर स्वावलंबी भी बना दिया। 'क्या ये कम है?'

कनॉट प्लेस के बरामदों में बैठकर अखबार और मैगजीन बेचने वालों के पास राम मनोहर लोहिया, इंद्र कुमार गुजराल, एम.एफ. हुसैन, दिल्ली के पहले मुख्यमंत्री चौधरी ब्रह्म प्रकाश, खुशवंत सिंह, एच.के. एल. भगत जैसी हस्तियां आती रही हैं। ब्रह्म प्रकाश जी तो कहते थे कि वह कनॉट प्लेस का चक्कर लगाते हुए यहां से अखबार और मैगजीन जरूर खरीदते हैं। बिदेश्वरी राय ने बीते चार दशकों के दौरान कनॉट प्लेस का चेहरा बदलते देखा है। सबसे बड़े बदलाव के बारे में कहते हैं, 'भाषा बदल गई है। जब इधर बैठना शुरू किया था तब ज्यादातर लोग अंग्रेजी में बतिया रहे होते थे। अब सब हिंदी बोलते हैं।'

एकदा

सूर के बदले सुर

बात तब की है, जब सूर पद रचने और उसे गाने भी लगे थे। हालांकि तब उनके पदों में ईश्वर के प्रति प्रेमी की खनक नहीं होती, बल्कि स्वयं के दीन-हीन होने के भाव होते थे। वह खुद को पतितों का सरताज मानते और आत्मग्लानि से भरे पद गाते। एक बार एक सभा में सूर ऐसे ही भावों से भरे पद गा रहे थे। पहली पंक्ति थी, *'हरि, हौं सब पतितनि कौ नायक...!'* यानी हे प्रभु, मैं तो सबसे बड़ा पापी हूं। सभा में श्री वल्लभाचार्य भी थे। जब उन्होंने सूरदास के पद सुने, तो लगभग झिड़कते हुए बोले, *'जो सूर हैं ते ऐसो घिघियात काहे को हैं? कछु भगवल्लीला वर्णन करि।'* वल्लभाचार्य ने कहा था, 'सूरदास, तुम्हारा तो नाम भी सूर (वीर पुरुष) है। फिर तुम घिघियाते या मन में दुख क्यों पालते हो? तुम्हारे पद दीनता की कालिमा से क्यों पुते हुए हैं? अरे, कुछ भगवद्लीला में रंगे पद रचो।'

Subrata Dhar

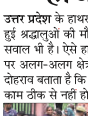

इस पर सूर मायूसी से बोले, 'असमर्थ हूं नाथ! भला मुझ दीन-हीन, नेत्रहीन से भगवद्लीला के पद कौन सुनेगा?' तब श्री वल्लभाचार्य ने उन्हें तत्वज्ञान का परम उपदेश दिया। इससे सूर के दिव्य नेत्र में दृष्टि का स्फुरण हुआ। अब उन्हें नंद नंदन के बालरूप के दृश्य दिखने लगे। नन्हें नटवर नागर की कभी पैंजनी सुनाई पड़ती, कभी घुंघरुओं की छमछम। कभी घुटनों के बल सरकते दिखते, तो कभी दूध के दांत दिखा किलकते। यह मनोहारी छवि कभी झलक देती, कभी ओझल हो जाती। प्रभु के इस लीलामयी खेल से सूर अघाए-हर्षाए रहते और प्रेम भरे हृदय से पद रचते। गदगद कंठ से उन पदों को सुर भी देते। बाल गोविंद के रूप माधुर्य के इतने सटीक वर्णन होते कि आंख वाले बड़े-बड़े ज्ञानी तक लजा जाते।

संकलन : आशुतोष महाराज

सदन में सत्ता पक्ष और विपक्ष के व्यवहार से लग रहा है कि दोनों अब भी चुनावी मोड में ही हैं

क्या आपसी भिड़ंत से आगे बढ़ेगी संसद

राज कुमार सिंह

राष्ट्रपति के अभिभाषण पर धन्यवाद प्रस्ताव को लेकर हुई चर्चा में नेता प्रतिपक्ष राहुल गांधी के भाषण और प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के उत्तर से साफ है कि चुनाव के एक महीने बाद भी दोनों पक्ष चुनावी मानसिकता से नहीं उबर पाए हैं। अन्य बक्ता भी इस सोच से मुक्त नहीं दिखे। पिछली दो लोकसभाओं में सत्ता पक्ष का जबरदस्त बहुमत था। 2014 में 16वीं लोकसभा में BJP ने तीन दशक लंबे अंतराल के बाद अकेले दम बहुमत हासिल कर सबको चौंका दिया था। वहीं, 17वीं लोकसभा में उसकी सीटें बढ़कर 303 हो गईं। फिर भी उसने NDA सरकार बनाकर दूरदर्शिता का परिचय दिया। लेकिन, दोनों ही लोकसभाओं में नेता प्रतिपक्ष की अनुपस्थिति से सत्तापक्ष और विपक्ष के रिश्तों में खटास का अंदाजा लगाया जा सकता है।

डेप्युटी स्पीकर पर तकरार | लंबे अरसे से लोकसभा में डेप्युटी स्पीकर पद विपक्ष को देने की भी परंपरा रही। 16वीं लोकसभा में BJP ने यह पद अपने मित्र दल AIADMK को दिया तो 17वीं लोकसभा में यह संवैधानिक पद खाली ही रह गया। इस बार भी डेप्युटी स्पीकर पद पर अभी तक खामोशी है। विपक्ष ने साफ कहा है कि अगर उसे डेप्युटी स्पीकर पद नहीं मिला तो वह अयोध्या से जीते अवधेश प्रसाद को उम्मीदवार बनाएगा।

चुनावी तैयारी | चुनाव परिणामों से हार-जीत का फैसला हो जाने के बाद भी सत्तापक्ष और विपक्ष परस्पर शक्ति परीक्षण का कोई मौका चूकते नहीं दिख रहे। नई लोकसभा का पहला सत्र इसका प्रमाण रहा। पहले तो NEET में हुए कथित घोटाले पर चर्चा को लेकर लोकसभा में हंगामा हुआ। बाद में राष्ट्रपति के अभिभाषण पर धन्यवाद प्रस्ताव पर चर्चा शुरू हुई तो देश-समाज के ज्वलंत मुद्दों पर गंभीर विमर्श के बजाय एक-दूसरे पर राजनीतिक निशाने साधे गए। ऐसा लगा कि दोनों पक्ष अभी भी चुनाव प्रचार की मानसिकता से बाहर नहीं निकल पाए हैं।

जनादेश की अवहेलना | लोकसभा में धन्यवाद प्रस्ताव पर लगभग 18 घंटे की चर्चा देश-समाज के सरोकारों से परे दोनों पक्षों के राजनीतिक निहितार्थों पर केंद्रित रही। चार जून को आए लोकसभा चुनाव परिणाम किसी भी पक्ष की अपेक्षाओं के अनुरूप नहीं रहे। ज्यादातर प्रेक्षकों का आकलन रहा कि जनता ने सत्तापक्ष को नियंत्रण में लाते हुए और विपक्ष को ताकत देते हुए परस्पर समन्वय से संसद और सरकार चलाने का जनादेश दिया है। लेकिन, संसद में आचरण-व्यवहार से नहीं लगता कि दोनों में से कोई भी पक्ष ऐसा करने के मूड में है।

टकराव का रास्ता
- चुनाव प्रचार शैली में लगाए गए आरोप
- सार्थक चर्चा के बजाय हुआ हंगामा
- एक-दूसरे के प्रति उपेक्षापूर्ण व्यवहार

मुद्दों पर चर्चा | नई लोकसभा के पहले ही सत्र में सत्तापक्ष और विपक्ष ने एक-दूसरे के प्रति उपेक्षापूर्ण और असम्मानजनक व्यवहार दिखाया है। इससे आशंकाएं गहराने लगी हैं कि संसद कहीं और पांच साल दलों और नेताओं की कटुता और राजनीतिक महत्वाकांक्षाओं की बंधक तो नहीं बनी रहेगी? राष्ट्रपति का अभिभाषण केंद्र सरकार तैयार करती है। स्वाभाविक ही उसमें सरकार की उपलब्धियों और आगामी योजनाओं का गुणगान होता है। लेकिन राजनीतिक दलों और उनके सांसदों से तो यह अपेक्षा की जाती है कि वे उस पर चर्चा करते हुए ज्वलंत मुद्दों से मुंह न चुराएं।

तल्ख भाषा क्यों | दो लोकसभाओं के बाद इस बार राहुल गांधी के रूप में सदन को नेता प्रतिपक्ष मिला। धन्यवाद प्रस्ताव पर एक जुलाई को उनके डेढ़ घंटे से भी लंबे भाषण की चर्चा भी बहुत है। राहुल की राजनीतिक समझ, भाषण शैली और आत्मविश्वास में सुधार दिखता है। उन्होंने साल भर से भी ज्यादा समय से जातीय हिंसा की आग में जल रहे मणिपुर से लेकर NEET समेत जनहित के कई मुद्दे भी उठाए। लेकिन, क्या उसके लिए पीएम मोदी और BJP पर तल्ख भाषा और चुनाव प्रचार की शैली में हमले करना जरूरी था? हिंदू होने, न होने का प्रमाणपत्र बांटने के लिए तो संसद नहीं है।

कटाक्ष किसलिए | पीएम मोदी और उनके मंत्रियों ने जिस तरह राहुल के भाषण के बीच हस्तक्षेप किया, वह भी अवांछित था। अपनी बारी आने पर हर सवाल का विस्तार से जवाब दिया जा सकता था। सदन के नेता के रूप में पीएम मोदी ने दो जुलाई को चर्चा का लगभग ढाई घंटे लंबा उत्तर दिया। लेकिन, 'बालक बुद्धि' से जुड़े किस्से-कहानियों के जरिये, नाम लिए बिना ही नेता प्रतिपक्ष पर कटाक्ष करना उनके अजेंडे में सबसे ऊपर रहा।

गरिमा की चिंता नहीं | बेशक प्रधानमंत्री के भाषण के दौरान विपक्ष की लगातार नारेबाजी संसदीय मर्यादा के प्रतिकूल है, लेकिन नई लोकसभा के पहले सत्र में मर्यादा-गरिमा की परवाह की किसने? प्रधानमंत्री ने ही भाषण के दौरान सदन को हाथरस की भगदड़ में अनेक लोगों की मौत की सूचना दी, पर लोकसभा ने उस पर संवेदना व्यक्त करने के बजाय विपक्ष की निंदा का प्रस्ताव पारित करना ज्यादा जरूरी समझा। सात दिन चला लोकसभा का पहला सत्र संसदीय लोकतंत्र के लिए चिंताजनक संकेत है।

(लेखक वरिष्ठ पत्रकार हैं)

क्राउड मैनेजमेंट नहीं होगा, तो होंगे हादसे

गोपाल राय

हाथरस जैसा हादसा देश में कोई पहली बार नहीं हुआ है, जब धार्मिक आयोजनों या सत्संग जैसे कार्यक्रमों में मची भगदड़ में लोग मारे गए हों। 2023 में इंदौर शहर में रामनवमी के दौरान एक प्राचीन बावड़ी के ऊपर लगाए गए पत्थर के स्लैब टूट गए थे। इससे वहां मची भगदड़ में 36 लोगों की मौत हो गई थी। इससे पहले जनवरी 2022 में जम्मू और कश्मीर के वैष्णो देवी मंदिर में मची भगदड़ में 12 लोगों की मौत हो गई और दर्जनों घायल हो गए। आंकड़े उठाकर देखें तो ऐसे हादसे लगातार होते रहे हैं।

भीड़ प्रबंधन | राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन प्राधिकरण (NDMA) ने भगदड़ को एक मानवीय आपदा माना है। भगदड़ से होने वाले जोखिम को कम करने के लिए भीड़ प्रबंधन योजना का प्रावधान किया गया है। जहां भी दो हजार से अधिक लोग एकत्र होते हैं वहां के लिए भीड़ प्रबंधन योजना होनी चाहिए। कुछ स्थान ऐसे हो सकते हैं जहां प्रतिदिन दो हजार से अधिक लोग आते हैं। ऐसे स्थानों के लिए हमेशा भीड़ प्रबंधन योजना होनी चाहिए। योजना का मूल्यांकन भी होना चाहिए, और जरूरत के मुताबिक उसमें बदलाव भी होते रहना चाहिए।

यूपी का हाल | उत्तर प्रदेश के हाथरस में यह बड़ा हादसा हुआ है। इसी प्रदेश में जब हम मंथन करते हैं कि भीड़ प्रबंधन योजना की यहां क्या स्थिति है, तो पता है कि वास्तविक धरातल पर कहीं भी कारगर भीड़ प्रबंधन योजना है ही नहीं। इतना जरूर है कि वाराणसी में विदेशी पर्यटकों के आगमन को देखते हुए भीड़ प्रबंधन योजना के लिए पहल की जा रही है। लेकिन अन्य शहरों, संस्थाओं, सामाजिक, धार्मिक और राजनीतिक आयोजनों में भीड़ प्रबंधन योजना या तो होती नहीं है, या होती भी है तो काफी लचर होती है। प्रदेश में ही मुख्यमंत्री स्कूल सुरक्षा योजना शुरू की गई है, लेकिन दो हजार से अधिक संख्या वाले स्कूल कॉलेजों के लिए कारगर भीड़ प्रबंधन योजना नहीं है। अन्य प्रदेशों का भी कमोबेश यही हाल है। राज्य आपदा प्रबंधन प्राधिकरण के अध्यक्ष स्वयं मुख्यमंत्री और मुख्य कार्यकारी मुख्य सचिव होते हैं।

अफवाह बड़ी वजह | सामाजिक, धार्मिक और राजनीतिक कार्यक्रमों में बड़ी तादाद में लोग आते हैं। भीड़ को देखते हुए पर्याप्त व्यवस्था न होने के कारण दुर्घटनाएं होती हैं। दुर्घटना से अधिक क्षति भगदड़ से होती है। ऐसे में कुछ जरूरी चीजों का ध्यान रखना चाहिए। अधिकतर भगदड़ की वजह अफवाहें होती हैं। लोगों को जागरूक करें कि अफवाहों पर ध्यान न दें, बल्कि सरकारी और प्रबंधन तंत्र की सूचनाओं पर यकीन करें। मामूली लगने वाले सुझाव या निर्देश भी बहुत काम के होते हैं। इनका पालन सुनिश्चित करना फायदेमंद होता है।

कॉमन रूम

प्रवेश व निकास | धैर्य बहुत जरूरी है। दुर्घटना होने पर भी धैर्य बनाये रखें। घबराकर इधर-उधर न भागें। लोगों को समझाना होगा कि वास्तविक कारणों से 10-20 फीसदी नुकसान होता है, जबकि भगदड़ से यह क्षति बढ़कर 80 फीसदी तक हो सकती है। आयोजकों को अतिरिक्त जागरूक होना होगा। जहां पर दो हजार से अधिक लोग एकत्र हो रहे हो, वहां के लिए क्राउड मैनेजमेंट प्लान बनाना ही होगा। लोगों को भी देखना होगा कि भीड़ वाली जगह के प्रवेश द्वार की चौड़ाई पांच मीटर से कम तो नहीं है, निकास द्वार की चौड़ाई चार मीटर से कम तो नहीं है। यदि ऐसा नहीं है तो हालात खतरनाक हो सकते हैं।

इमरजेंसी एग्जिट | जहां भी ऐसे आयोजन हो रहे हो, इमरजेंसी एग्जिट जरूर बनाया जाना चाहिए। लोगों को भी इसकी चेकिंग करनी चाहिए। देखना चाहिए कि निकलने के लिए, कितने निकास द्वार बनाए गए हैं और जरूरत पड़ने पर किधर से निकलना ठीक रहेगा। आयोजकों को प्रवेश द्वार और निकास द्वार की दूरी समारोह स्थल से कम से कम 20 मीटर पर रखनी होगी। और अगर सभी व्यवस्थाओं के बीच भी किसी कारण से भगदड़ मच जाती है तो पहले खुद को साइड में करें, थोड़ी देर बाद निकलने की कोशिश करें।

जगत सेठ से कर्ज़ लेते थे मुगल

अरुण सिंह

पटना सिटी के चौक से पूरब की ओर एक गली निकलती है। उत्तर दिशा में गंगा के घाट पर जाकर खत्म होती इस गली के आखिरी छोर पर नजर आता है एक विशाल भवन का अवशेष। यह कभी हीरानंद साहू का आवास हुआ करता था। उस हीरानंद साहू का, जिसके वंशज पूरी दुनिया में 'जगत सेठ' के नाम से मशहूर हुए। 'हाउस ऑफ़ जगत सेठ' के लेखक जे. एच. लिटिल ने जगत सेठ परिवार की तुलना विश्व विख्यात बैंकर रोथ्सचाइल्ड से की।

पटना से शुरुआत | बंगाल-बिहार के राजनीतिक और आर्थिक मामलों में जगत सेठ के परिवार की भूमिका अहम रही। इस परिवार ने मुगलों से लेकर ईस्ट इंडिया कंपनी तक की मदद की, कर्ज दिए। हीरानंद के दादा और पिता साधारण व्यापारी थे। लेकिन, संभावनाओं की तलाश 1652 ई. में हीरानंद को पटना ले आई। हीरानंद व्यापारियों को कर्ज देने लगे। उसी समय ईस्ट इंडिया कंपनी ने भी पटना में कारखाना शुरू किया। कंपनी के मुलाजिम कई बार हीरानंद से कर्ज लेते। इससे हीरानंद धनी होते गए।

टाइम मशीन

मुर्शिदाबाद दरबार | उनके सात बेटों में से एक माणिक चंद ढाका गए, जहां उनका सिक्का जम गया। वह बड़े पैमाने पर नामी व्यापारियों के साथ कारोबार करने लगे। इस दौरान माणिक की दोस्ती हुई बंगाल सूबे के दीवान मुर्शिद कुली खान से। मुर्शिद को औरंगजेब ने नियुक्त किया था। दीवान बनने के बाद सूबे का खजाना और वित्तीय लेनदेन मुर्शिद के अधीन हो गया, जो धीरे-धीरे माणिक चंद के नियंत्रण में चला गया। इस पर औरंगजेब के पोते अजीम-उश-शान से मुर्शिद का टकराव हुआ। मुर्शिद का तबादला मकसूदाबाद कर दिया गया। मुर्शिद और माणिक ने संकल्प लिया कि वे मकसूदाबाद को विकसित करेंगे। उन्होंने इसका नाम मुर्शिदाबाद रखा।

दो हजार गार्ड | माणिक चंद ने दो हजार हथियारबंद मुलाजिम केवल अपने आवासीय परिसरों और व्यावसायिक प्रतिष्ठानों की सुरक्षा के लिए रखे थे। 1712 में जब फर्रुखसियर बादशाह बना, तो नकदी के लिए उसे माणिक चंद के आगे हाथ फैलाना पड़ा। बाद के मुगल बादशाह भी माणिक चंद और उनके वंशजों पर ही निर्भर रहे। फर्रुखसियर ने माणिक के खुश होकर नगर सेठ की उपाधि दी।

सियासत से पतन | माणिक चंद की अपनी कोई औलाद नहीं थी। उन्होंने अपनी बहन के बेटे फतेह चंद को गोद लिया था। फतेह चंद परिवार के कारोबार को आर्थिक समृद्धि के शिखर पर ले गया। 1744 में फतेह चंद की मौत के बाद उसके पोते महताब राय ने जगत सेठ का पदभार संभाला। कर्ज न देने पर महताब और बंगाल के नवाब सिराजुद्दौला में ठन गई। जगत सेठ ने सिराजुद्दौला के खिलाफ मीर जाफर और अंग्रेजों से हाथ मिलाया और प्लासी के युद्ध पर 2.80 करोड़ रुपये खर्च किए थे। हालांकि मीर जाफर को अंग्रेजों ने गद्दी से उतारकर उसके दामाद मीर कासिम को नवाब बना दिया। लेकिन, मीर कासिम की भी अंग्रेजों से नहीं बनी। उसने अंग्रेजों के खिलाफ बगावत कर दी। उसे लगा कि जगत सेठ उसके साथ विश्वासघात करेंगे तो उसने महताब और उसके भाई की हत्या करा दी। यहीं से शुरू हो गया जगत सेठ के परिवार का पतन।

बदल रही है हवा

प्रणव प्रियदर्शी

देश के मशहूर मैनेजमेंट इंस्टिट्यूट्स में भी जेंडर डायवर्सिटी पर जोर बढ़ रहा है। इसी का परिणाम है कि छह फर्स्ट जेनरेशन IIMs में से कम से कम तीन में इस साल रेकॉर्ड नंबर में लड़कियों के एडमिशन हुए हैं। इन संस्थानों के फ्लैगशिप पोस्ट ग्रैजुएट प्रोग्राम (PGP) में लड़कियों की संख्या बढ़ने के कई कारण हैं, लेकिन पहले यह देख लेना ठीक रहेगा कि किन संस्थानों में किस तरह का इजाफा हुआ है। इनमें सबसे आगे है IIM कोझिकोड, जहां 2024-26 बैच के कुल 491 स्टूडेंट्स में 290 यानी 59.1% लड़कियां हैं। वहां पिछला रेकॉर्ड 2020-22 बैच का था, जिसमें लड़कियों का प्रतिशत 53.2 था। दूसरे नंबर पर IIM बेंगलुरु है, जहां 40% लड़कियों का एडमिशन हुआ है। IIM लखनऊ में अभी तक हुए एडमिशन में लड़कियों का प्रतिशत 36.5 है। अगर सभी छह टॉप IIM – बेंगलुरु, अहमदाबाद, कोलकाता, इंदौर, लखनऊ और कोझिकोड- का औसत देखा जाए तो दो साल के PGP में एडमिशन लेने वाले हर 10 स्टूडेंट्स में से चार लड़कियां हैं। जेंडर डायवर्सिटी के इस ट्रेंड के पीछे मुख्यतया इंडस्ट्री का दबाव है, जहां यह अहसास बढ़ता जा रहा है कि समाज के बदलते माहौल के मद्देनजर मार्केट को अच्छी तरह कवर करने के लिहाज से जेंडर डायवर्सिटी पर ध्यान देना जरूरी है। इंडस्ट्री एक्सपर्ट्स भी इस बात की पुष्टि करते हैं कि कंपनियों के रिक्रूटमेंट में बैलेंस बनाए रखने पर खासा जोर होता है। बहरहाल, हर क्षेत्र में लड़कियों का बढ़ता दखल समाज के पारंपरिक पितृसत्तात्मक स्वरूप के मद्देनजर एक अच्छा बदलाव है। इसके पीछे समाज की बदलती सोच को मुख्य प्रेरक शक्ति के रूप में रेखांकित किया जा सकता है। वाकई लोगों की सोच बदले तो माहौल बदलने में देर नहीं लगती। किसी शायर ने ठीक ही कहा है, *'बादल सहन पे छाएं तो किसी गफ़लत में मत रहना/ हवा का रुख बदलते ही घटा का रुख बदलता है।'*

AI Image

आधी दुनिया

रीडर्स मेल

www.edit.nbt.in

■ कारगर होंगे नए कानून

3 जुलाई का संपादकीय 'व्यवहार में होंगी परख' पढ़ा। बेशक ब्रिटिश काल के पुराने पड़ चुके कानूनों को स्वतंत्र भारत के लिहाज से परिवर्तित करना प्रासंगिक ही नहीं, अपरिहार्य भी था। किसी भी नए कानून के प्रति शंका, आशंका, संदेह की गुंजाइश होना स्वाभाविक है। गृहमंत्री अमित शाह विपक्ष के सवालों, संदेहों को निर्मूल करने के प्रति आश्वस्त हैं। माना जा रहा है तीनों नए कानून दोष साबित करने में 90 प्रतिशत ज्यादा कारगर साबित होंगे। इससे एक अच्छी उम्मीद जगाई जा रही है। फिलहाल न्याय तंत्र से जुड़ी जनशक्ति पर काम का बोझ बहुत ज्यादा है। उसके लिए नई राह निकलेगी।

माम चंद सागर, ईमेल से

■ राहत भरी बात

यह पत्र 3 जुलाई के लेख 'दुनिया आज भारत को कैसे देखती है' से संबंधित है। मोदी सरकार का तीसरी बार सत्ता में आना न सिर्फ भारत, बल्कि पूरी दुनिया के लिए राहत भरी बात है। संयुक्त राष्ट्र संघ और दूसरी अंतरराष्ट्रीय संस्थाएं रूस-यूक्रेन और इस्राइल-हमास युद्ध को बंद करवाने में असफल हैं। इसमें मोदी की विदेश नीति काम आएगी। पीएम मोदी ने देश की सामरिक क्षमता बढ़ाने और आर्थिक मोर्चे पर आगे ले जाने के लिए बहुत काम किया है। अब उम्मीद जताई जा रही है कि भारत दुनिया की तीसरी आर्थिक शक्ति बन जाएगा।

विभूति बुपक्या, ईमेल से

■ आपदाओं से सीख लें

हाथरस में सत्संग के बाद मची भगदड़ में इतनी बड़ी संख्या में हुई मौतें दुर्भाग्यपूर्ण हैं। मध्य प्रदेश के रतनगढ़ मंदिर, राजस्थान में चामुंडा देवी, जम्मू में वैष्णो देवी, हिमाचल में नैना देवी में पिछले कुछ बरसों में ऐसी घटनाएं हुई हैं, जिनमें निर्दोष लोगों को जान गंवानी पड़ी। घटना के बाद वह बाबा फरार हो गए, जिनका प्रवचन सुनने के लिए लोग आए थे। सत्संग के आयोजकों को गिरफ्तार किया जाना चाहिए ताकि सारी सच्चाई सामने आ सके। वैसे आपदाएं बोलकर नहीं आतीं, लेकिन उसके असर को कम करने की तैयारी पहले से की जा सकती है।

बाल गोविंद, नोएडा

nbtedit@timesgroup.com पर अपनी राय नाम-पते के साथ मेल करें।

अंतिम पत्र

बिहार में पिछले 11 दिनों में पांच पुल टूटे - एक खबर

- शायद पुलों ने गर्मी से बचने के लिए नदी में छलांग लगा दी होगी!

संजय डागा

THE SPEAKING TREE

और पढ़ने के लिए देखें

hindi.speakingtree.in

ध्यान का फैलाव हमें अनोखी शांति से भर देता है

अमित वर्मा

जीवन की भागमभाग में हम अक्सर अपने आप को खो देते हैं। हम अपने विचारों, भावनाओं, और इच्छाओं के चक्कर में फंसे रहते हैं। और मन की शांत गहराइयों में उतरने का मौका ही नहीं मिलता। लेकिन इस हलचल भरे जीवन में अपने मन को शांत करने और अपने आप से जुड़ने के लिए ध्यान का अभ्यास बेहतर रास्ता होता है, मजबूत सहारा होता है। जब ध्यान की इस दुनिया में उतरते हैं तो पाते हैं यहां भी कई रास्ते हैं, कई चौराहे हैं। कुछ लोग अपनी सांसों पर ध्यान केंद्रित करते हैं, कुछ अपनी भावनाओं को देखते हैं, कुछ अपने शरीर के अंदर की यात्रा करते हैं। लेकिन कुछ लोग, आकाश की ओर अपना ध्यान फैलाते हैं।

आकाश की ओर ध्यान फैलाने का मतलब है अपनी चेतना को बाहर की ओर ले जाना। यह एक अनोखी यात्रा है, एक ऐसा अनुभव है जो आपको अपने आप से परिचित कराता है। पहले आप अपने कमरे में, अपनी चारों दिशाओं में, अपने आस-पास की जगह महसूस करते हैं। आपकी चेतना धीरे-धीरे फैलती है। वह दीवारों, छत और फर्श को महसूस करती है। फिर आप अपने ध्यान को बढ़ाते हैं, अपने घर, मोहल्ले, शहर को महसूस करते हुए अंत में पूरी दुनिया को घेरते हैं।

यह एक विशाल खालीपन की यात्रा है, एक ऐसी जगह जहां आप खुद को बिलकुल खाली महसूस करते हैं। लेकिन यह खालीपन भयावह नहीं है। यह एक शांतिपूर्ण खालीपन है, जहां कोई चिंता नहीं है, कोई डर नहीं है, कोई इच्छा नहीं है। आप अपने आसपास की ऊर्जाएं महसूस करते हैं, आवाजें सुनते हैं, लेकिन आप उनसे जुड़ते नहीं हैं। आप सिर्फ उनका अस्तित्व महसूस करते हैं, बिना किसी भावना के, बिना किसी नकारात्मक या सकारात्मक विचार के।

जैसे-जैसे आप इस खालीपन में डूबते जाते हैं, आप महसूस करते हैं कि आप इस खालीपन का हिस्सा हैं। आपकी चेतना आकाश की तरह फैल जाती है, जिसमें सब कुछ है लेकिन कुछ भी नहीं है। यह खालीपन मन को एक खास तरह की शांति देता है।

इस ध्यान में जाकर ही समझ आता है कि इस दुनिया में सब कुछ क्षणभंगुर है, निरंतर बदलता रहता है। जैसे मौसम बदलते हैं, वैसे ही जीवन में भी परिवर्तन आते रहेंगे। फिर हम यह भी समझ पाते हैं कि इस दुनिया में सब कुछ खाली है, निरर्थक है। यह खालीपन मुक्ति की ओर तो ले जा सकता है, लेकिन इसे समझना आसान नहीं है। यह खालीपन यह भी समझाता है कि हम सिर्फ एक शरीर नहीं हैं, या महज अपने विचारों का समूह नहीं हैं। हम इस खालीपन का ही हिस्सा हैं, इस अनंत आकाश का एक छोटा सा हिस्सा।

यह यात्रा आसान नहीं है। इस यात्रा में हमें अपने मन को शांत करने की जरूरत है, और इस दुनिया की चिंताओं से दूर होने की जरूरत है। लेकिन यह यात्रा काफी फलदायक भी होती है। आकाश में खो जाना मन को एक नई शांति देता है, एक नया दृष्टिकोण देता है। यह ध्यान हमें अपने आप से जुड़ने का एक अद्वितीय मौका देता है, एक ऐसा मौका जो हमारी यात्रा के लिए नई दिशा दे सकता है। और शायद इसी शांति की खोज में हम सब अपनी यात्रा करते रहते हैं।

आर.एन.आई. नं. 53057/92 पंजीकरण सं. ... बेनेट, कोलमैन एंड कंपनी लिमिटेड के लिए मुद्रक एवं प्रकाशक द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित ... संपादक : सुधीर मिश्र ...